ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन-ग्रन्थमाला [प्राकृत ग्रन्थाङ्क ७]

सिरि भगवंत भूदबलि भडारय पणीदो

महाबंधो

[महाधवल सिद्धान्तशास्त्र]

३ तदियो अणुभागबंधाहियारो

[तृतीय अनुभागबन्धाधिकार]

पुस्तक ५

हिन्दी भाषानुवाद सहित

—सम्पादक—

पण्डित फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

प्रथम आवृत्ति
१००० प्रति

आषाढ़ वीर नि० सं० २४८२
वि० सं० २०१३
जून १९५६

मूल्य १३ रु०

प्रशस्ति

जितखेतोजातनुर्वीश्वरमकुटतटोद्घृष्टपादारविन्द-
द्वितयं वाक्कामिनीपीवरकुचकलशालङ्कृतोदारहार ।
प्रतिमं दुर्दारसंसृत्यसुलविपिनदावानलं माघनन्दि-
व्रतिनाथं शारदाभ्रोज्ज्वलविशदयशो राजिताशान्तकान्तम् ॥१॥
भावभवविजयिवरवाग्देवीमुखदर्पणनान–।
भूनावनि पालकनेसेदनिलाविश्रुतकिर्त्ते माघनन्दिमुनीन्द्रम् ॥ २ ॥
वरराद्धान्ताम्भोनिधितरलतरङ्गोत्करक्षालितान्तः-
करणं श्रीमेघचन्द्रव्रतिपतिपदपङ्केरुहासक्तपद्–।
चरणं तीव्रप्रतापोद्धतविततबलोपेतपुष्पेषु भृस्सं–
हरणं सैद्धान्तिकाग्रेसरनेने नेकळ्द् माघनन्दिव्रतीन्द्रम् ॥ ३ ॥
महनीयगुणनिधानं सहजोन्नतबुद्धिविनयनिधियेने नेगळ्दम् ।
महिविनुतकिर्त्ते कित्तितमहिमानं मानिताभिमानं सेनम् ॥ ४ ॥
विनयद शीलदोळ् गुणदगाळिय पेंपिनपुट्टिजमनो-
जनरति रूपिनोळ् पनिकिसिर्द-मनोहरमप्पुदोन्दु रू-।
पिन मने दानदागरमेनिप्प वधूत्तमेयप्प सन्दसे-
नन सति मल्लिकब्बेगे धरित्रियोळार् दोरे सद्गुणङ्गळिम् ॥ ५ ॥
सकलधरित्रीविनुतप्रकटितधीयशे मल्लिकब्बे बरेसि सपु-
ण्याकरमहाबन्धद पुस्तकं श्रीमाघनन्दिमुनिगळिगित्तळ ॥ ६ ॥

जिसने मन्मथ को जीत लिया है, जिसके दोनों पादकमलों को राजाओं के मुकुट के अग्रभाग चूमते हैं, जो सरस्वती के पीवर स्तनकलशोंसे अलंकृत मनोहर हार के समान है, जो दुर्निवार संसाररूपी विपुल कानन के लिये दावानलस्वरूप है, ऐसा माघनन्दिव्रतिपती शरत्कालीन मेघके समान दिगन्तव्याप्त उज्ज्वल यश से विराजमान है ॥ १ ॥

मन्मथविजयी, सरस्वती मुख के लिये दर्पणरूप और पृथ्वीविश्रुतकीर्ति माघनन्दिमुनीन्द्र पृथ्वी-पालक हैं ॥ २ ॥

जो श्रेष्ठ सिद्धान्तरूपी समुद्र के तरल तरङ्गों से प्रक्षालित अन्तःकरणवाला है, जो श्री मेघचन्द्र व्रतिपति के पादकमलों में आसक्त भ्रमर के समान है, जो तीव्र प्रतापी है, जिसने अपने विपुलबल से मन्मथ को जीत लिया है ऐसा माघनन्दि व्रतीन्द्र सैद्धान्तिकाग्रेसर के नाम से प्रख्यात था ॥ ३ ॥

जो महनीय गुणों का आकर है, जो सहज और उन्नत बुद्धि तथा विनय का निधिस्वरूप है, पृथिवी में जिसकी कीर्ति वन्दनीय है, जिसकी महिमा विख्यात है और जिसका मान-सम्मान है वह सेन प्रसिद्ध है ॥ ४ ॥

पृथ्वी में सद्गुणों में विनययुक्त, शीलवती, रति के समान मनोहर रूपवती और दानशूर ऐसी सन्दसेन की भार्या मल्लिकब्बे के समान कौन है ॥ ५ ॥

सकल पृथ्वी मण्डल के द्वारा विनुत तथा प्रख्यात बुद्धि और यशवली मल्लिकब्बे ने पुण्याकर महाबन्ध पुस्तक लिखवाकर माघनन्दि मुनीन्द्र को भेंट की ॥ ६ ॥

यह प्रशस्ति अनुभागबन्ध के अन्त में उपलब्ध होती है। स्थितिबन्धके अन्तमें भी एक प्रशस्ति आई है। गुणभद्रसूरिके उल्लेख को छोड़कर इस प्रशस्तिमें वही बात कही गई है जिसका निर्देश स्थिति-बन्धके अन्तमें पाई जानेवाली प्रशस्तिमें किया है। मात्र इसमें मेघचन्द्र व्रतपतिका विशेष रूपसे उल्लेख किया है और माघनन्दि व्रतपतिको इनके पादकमलोंमें आसक्त बतलाया है।

विषय-सूची

सन्निकर्षप्ररूपणा	**१**	**१२**
सन्निकर्षके दो भेद		१
स्वस्थानसन्निकर्ष	१	६८
उत्कृष्ट सन्निकर्ष	१	२७
जघन्य सन्निकर्ष		६८
परस्थान सन्निकर्ष	६८	१२६
उत्कृष्ट सन्निकर्ष	६८	९३
जघन्य सन्निकर्ष	९३	१२६
भंगविचयप्ररूपणा	**१२६**	**१२९**
उत्कृष्ट	१२६	१२७
जघन्य	१२८	१२९
प्ररूपणा	**१२९**	**१३१**
उत्कृष्ट	१२९	१३०
जघन्य	१३०	१३१
परिमाणप्ररूपणा	**१३१**	**१४२**
उत्कृष्ट	१३१	१३७
जघन्य	१३७	१४२
क्षेत्रप्ररूपणा	**१४२**	**१५१**
उत्कृष्ट	१४२	१४६
जघन्य	१४६	१५१
स्पर्शनप्ररूपणा	**१५१**	**२११**
उत्कृष्ट	१५१	१८२
जघन्य	१८२	२११
कालप्ररूपणा	**२११**	**२१६**
उत्कृष्ट	२११	२१४
जघन्य	२१४	२१६
अन्तरप्ररूपणा	**२१६**	**२१९**
उत्कृष्ट	२१६	२१७
जघन्य	२१८	२१९
भावप्ररूपणा		**२२०**
अल्पबहुत्वप्ररूपणा	**२२०**	**२३९**
अल्पबहुत्वके दो भेद		२२०
स्वस्थान अल्पबहुत्व	**२२०**	**२२८**
उत्कृष्ट	२२०	२२४
जघन्य	२२४	२२८
परस्थान अल्पबहुत्व	**२२८**	**२३९**
उत्कृष्ट	२२८	२३३
जघन्य	२३३	२३९
भुजगारबन्ध	**२३९**	**३२५**
अर्थपद	२३९	२४०
समुत्कीर्तना	२४०	२४१
स्वामित्व	२४१	२४४
काल		२४४
अन्तर	२४५	२७६
भंगविचय	२७६	२७८
भागाभाग	२७८	२७९
परिमाण	२७९	२८३
क्षेत्र	२८३	२८५
स्पर्शन	२८६	३०९
काल	३०९	३१२
अन्तर	३१२	३१७
भाव	३१७	३१८
अल्पबहुत्व	३१८	३२५
पदनिक्षेप	**३२५**	**३५९**
समुत्कीर्तना		३२५
दो भेद		३२५
उत्कृष्ट		३२५
जघन्य		३२५
स्वामित्व	३२५	३५५
दो भेद		३२५
उत्कृष्ट	३२५	३४०
जघन्य	३४०	३५५
अल्पबहुत्व	३५६	३५९
दो भेद		३२६
उत्कृष्ट	३५६	३५७
जघन्य	३५७	३५९
वृद्धि	**३५९**	**३७२**
समुत्कीर्तना	३५९	३६१
स्वामित्व		३६१
काल		३६१
अन्तर		३६२
भंगविचय		३६३
भागाभाग	३६३	३६४
परिमाण		३६४
क्षेत्र		३६५
स्पर्शन	३६५	३६६
काल	३६७	३६८
अन्तर	३६९	३७०
भाव		३७१
अल्पबहुत्व	३७१	३७२
अध्यवसानसमुदाहार	**३७२**	**४१३**
तीन भेद		३७२
प्रकृति समुदाहार	**३७३**	**३८६**
दो भेद		३७३
प्रमाणानुगम		३७३
अल्पबहुत्व	३७३	३८६
दो भेद		३७३
स्वस्थान अल्पबहुत्व	३७३	३७७
परस्थान अल्पबहुत्व	३७७	३८६
स्थितिसमुदाहार	**३८७**	**३९२**
दो भेद		३८७
प्रमाणानुगम		३८७
श्रेणिप्ररूपणा	३८७	३८९
दो भेद		३८७
अनन्तरोपनिधा	३८७	३८८
परम्परोपनिधा	३८८	३८९
अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान	**३८९**	**३९२**
दो भेद		३९०
अनन्तरोपनिधा	३९०	३९१
परम्परोपनिधा	३९१	३९२
तीव्रमन्दता	**३९२**	**४१३**
अनुकृष्टि	३९२	३९८
तीव्रमन्द	३९९	४१३
जीवसमुदाहार	**४१३**	**४१५**

मार्गदर्शक :- आचार्य श्रुतविद्यासागर जी महाराज

सिरिभगवंतभूदबलिभडारयपणीदो

महाबंधो

तदियो अणुभागबंधाहियारो

१५ सण्णियासपरूवणा

१. सण्णियासं दुविधं—सत्थाणं परत्थाणं च। सत्थाणं दुवि०—जह० उक्क०। उक्कस्सए पगदं। दुवि०—ओघे आदे०। ओघे० आभिणिबोधिणाणावरणस्स उक्कस्सयं अणुभागं बंधंतो चदु[1]णाणावरणीयं णियमा बंधगो तं तु उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाणपदिदं बंधदि अणंतभागहीणं वा ५। एवमण्णमण्णाणं। णिद्दाणिद्दाए उक्क० बं० अट्ठदंस० णियमा बं०। तं तु छट्ठाणपदिदं बंधदि। एवमण्णमण्णाणं। साद० उ० बं० असाद० अबंधगो। असाद० उ० बं० साद० अबंध०। एवं आउ-गोदं पि।

---

१५ सन्निकर्षप्ररूपणा

१. सन्निकर्ष दो प्रकारका है—स्वस्थान सन्निकर्ष और परस्थान सन्निकर्ष। स्वस्थान सन्निकर्ष दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे आभिनिबोधिकज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह उनके उत्कृष्ट अनुभागबन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। या तो अनन्तभागहीन अनुभागका बन्ध करता है या असंख्यात भागहीन या संख्यातभागहीन या संख्यातगुणहीन या असंख्यातगुणहीन या अनन्तगुणहीन अनुभागका बन्ध करता है। पाँचों ज्ञानावरणोंका इसी प्रकार परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। निद्रानिद्राके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव आठ दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभाग का भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह उनके उत्कृष्ट अनुभागबन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। सब दर्शनावरणोंका परस्पर इसी प्रकार सन्निकर्ष जानना चाहिए। सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव असातावेदनीयका बन्ध नहीं करता है। असातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सातावेदनीयका बन्ध नहीं करता है। इसी प्रकार आयु और गोत्र कर्मके विषयमें भी जानना चाहिए।

---

१. ता० प्रतौ अणुभागा (गं) चदु– इति पाठः।

२. मिच्छ० उ० बं० सोलसक०-णवुंस-अरदि-सोग-भय०-दु० णिय० बं०। तं तु छट्ठाण०। एवं सोलसक०-पंचणोक०। इत्थि० उ० बं० मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग०-भय०-दु० णि० बं० अणंतगुणहीणं बं०। एवं पुरिस०। हस्स० उक्क० बं० मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु० णियमा बं० अणंतगुणहीणं बं०। इत्थि०-णवुंस० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० णि० अणु० अणंतगुणहीणं। रदि० णिय० तं तु०। एवं रदीए०।

३. णिरयगदि० उ० बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थ० ४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि० बं० अणंतगुणहीणं बं०[1]। हुंड०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णि० बं०। तं तु० छट्ठाणपदिदं। एवं णिरयाणु०।

---

२. मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह उनके उत्कृष्ट अनुभाग बन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार सोलह कषाय और पाँच नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। स्त्रीवेदके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इनके अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इनके अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो नियमसे इनके अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। रतिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उसके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह उसके उत्कृष्ट अनुभाग बन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३. नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु तीन, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इनके अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह इनके उत्कृष्ट अनुभागबन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

---

१. ता०-आ०प्रत्योः 'रदि० णिय०' इत आरभ्य 'णिमि० णि० बं० अणंतगुणहीणं बं०' इति यावत् पाठस्य पुनरावृत्तिः।

४. तिरिक्खगदि० उ० बं० एइंदि०-अप्पसत्थवि[1]०-थावर-दुस्सर सिया तं तु० छट्ठाणपदिदं बं० । पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त-आदाउज्जो०-तस० सिया अणंतगुणहीणं बं० । ओरालिय०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं । हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच णिय० तं तु० छट्ठाणपदिदं० । एवं तिरिक्खाणु० ।

५. मणुसग० उ० बं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थापसत्थवण्ण ४-अगु०४-पसत्थ०-तस०-४-थिरादिछ०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-मणुसाणु० णिय० बं० तं तु० छट्ठाणपदिदं० । तित्थ[2]० सिया० अणंतगुण० बं० । एवं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० ।

६. देवगदि० उ० बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्विय-

---

४. तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह उनके अपने उत्कृष्ट बन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह इनके अपने उत्कृष्ट बन्धकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु तीन, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो उनके अपने उत्कृष्ट बन्धकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान पतित हानिको लिए हुए बन्ध करता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

५. मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए बन्ध करता है। औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है। तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं करता। यदि बन्ध करता है तो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार अर्थात् मनुष्यगतिके समान औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६. देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर,

---

१. ता० आ० प्रत्यो० एइंदि० अप्पसत्थ० अप्पसत्थवि० इति पाठः। २. आ०प्रतौ पदिदं०। आहारदुगं तित्थ० इति पाठः।

अंगो[1]०-पसत्थ०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच०-णिमि० णिय० बं० । तं तु० छट्ठाणपदिदं । आहारदुग-तित्थ० सिया० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । अप्पसत्थ०४-उप०-जस० णिय० अणंतगुणहीणं० । एवमेदाओ पसत्थाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

७. एइंदि० उ० बं० तिरिक्खग०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर-अथिरादिपंच णिय० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं० । आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणहीणं० । एवं थावर० । बीइंदि० उ० बं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर-

---

तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है। आहारक द्विक और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् बन्ध नहीं करता। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है। अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपघात और यशःकीर्तिका नियमसे अनन्तगुणी हानिको लिये हुए अनुत्कृष्ट बन्ध करता है। इसी प्रकार इन प्रशस्त प्रकृतियोंका एक दूसरेकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनका परस्पर अनुभाग बन्ध उत्कृष्ट भी करता है और अनुत्कृष्ट भी। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो उनका वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए अनुभाग बन्ध करता है।

७. एकेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे अनन्तगुणा हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं बन्ध करता। यदि बन्ध करता है तो नियमसे अनन्तगुणा हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। द्वीन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे अनन्तगुणा हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है या अनुत्कृष्ट अनुभागका

---

१. ता०-आ०प्रत्योः समचदु० अप्पसत्थवि० अंगो० इति पाठः।

अपज्ज०-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं। [असंप० णि० तं तु०]। एवं तेइंदि०-चदुरिंदि०।

८. णग्गोद० उ० बं० तिरिक्खग०-मणुसग०-चदुसंघ०-दोआणु०-उज्जो० सिया अणंतगुणहीणं बं०। पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-[अ-] पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं। एवं सादि०। णवरि तिण्णिसंघ०।

९. खुज्ज० उ० अणु० बं० तिरिक्ख०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-[अ-] पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं०। दोसंघ०-उज्जो० सिया० अणंतगु०। एवं वामणसंठा०। णवरि एयसंघ०[1]-उज्जो० सिया अणंतगु०।

१०. हुंड० उ० बं० णिरय-तिरिक्खग०-एइंदि०-असंप०-दोआणु०-अप्पसत्थ-विहा०-[थावर०]-दुस्सर० सिया०। तं तु० छट्ठाणपदिदं०। पंचिंदि०-ओरालि०-वेउव्वि०-दोअंगो०-आदाव०-तस०[2] सिया० अणंतगु०। तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०४-अज्ज

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रियजातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

८. न्यग्रोध संस्थानके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् अनन्तगुणा हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे अनन्तगुणाहीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार स्वाति संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके तीन संहनन कहने चाहिए।

९. कुब्जक संस्थानके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क अस्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे अनन्तगुणा हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। दो संहनन और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। जो अनन्तगुणा हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वह एक संहनन और उद्योतका कदाचित् अनन्तगुणा हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है।

१०. हुण्ड संस्थानके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह इनका छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है। पंचेन्द्रियजाति, औदारिक-शरीर, वैक्रियिकशरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, आतप और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा

१. ता०-आ० प्रत्योः असंघ० इति पाठः। २. ता०-आ०प्रत्योः आदाउज्जो० तस० इति पाठः।

बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंतगुण० । उज्जोवं सिया अणंतगुणहीणं० । अप्पसत्थ०४-उप०-अथिरादिपंच० णिय०[1] । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । एवं हुंड०भंगो अप्पसत्थवण्ण०४-उप०-अथिरादिपंच । यथा संठाणं तथा चदुसंघ० ।

११. असंप० उ० अणु० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-अप्पसत्थवण्ण०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पस०-अथिरादिछ० णि० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं० । उज्जो० सिया० अणंतगुणहीणं[2] ।

१२. आदाव० उ० बं० तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-दूभ०-अणादे०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० अणंतगुणहीणं० । उज्जो० उ० बं०[3] तिरिक्ख०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-

---

हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपघात और अस्थिर आदि पाँच का नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार हुण्डक संस्थानके समान अप्रशस्तवर्ण चतुष्क, उपघात और अस्थिर आदि पाँचकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । जिस प्रकार चार संस्थानोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहा है उसी प्रकार चार संहननोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

११. असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि वह इनके अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो इनका छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है । पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्तवर्ण चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रस चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणेहीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणेहीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है ।

१२. आतपके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, अनादेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्धको लिये हुए होता है । स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । उद्योतके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करने-

---

१. ता०-आ०प्रत्योः पंच णिमि० णिय० इति पाठः । २. ता० आ०प्रत्योः 'अणंतगुणहीणं' अतोऽग्रे 'यथा गदि तथा आणुपुव्वि०' इत्यधिकः पाठोऽस्ति । ३. ता० आ०प्रत्योः उज्जो० उप० तिरिक्ख० इति पाठः ।

ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णिय० अणंतगु० ।

१३. अप्पसत्थ० उ० बं० णिरय०-तिरिक्ख०-असंप०-दोआणु० सिया० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । पंचिंदि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-तस४-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं० । ओरालि०-वेउव्वि०-दोअंगो०-उज्जो० सिया० अणंतगुणहीणं० । हुंड०-अप्पसत्थवण्ण०४-उप०-अथिरादिछ० णिय० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । एवं दुस्सर० ।

१४. सुहुम० उ० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थवण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं० । अपज्ज०-साधार० णिय० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । एवं अपज्जत्त-साधारण० । पंचंतराइयाणं णाणावरणभंगो ।

१५. णिरएसु सत्तण्णं कम्माणं ओघं । तिरिक्ख० उ० बं० पंचिंदि०-

वाला जीव तिर्यञ्चगति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है।

१३. अप्रशस्त विहायोगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, तिर्यञ्चगति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु त्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१४. सूक्ष्मके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। अपर्याप्त और साधारणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अपर्याप्त और साधारणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। पाँच अन्तरायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्षका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है।

१५. नारकियोंमें सात कर्मोंका भंग ओघके समान है। तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका

ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं। हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णिय०। तं तु० छट्ठाणपदिदं०। उज्जो० सिया० अणंतगुणहीणं०। एवं तिरिक्खगदिभंगो हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०।

मूलविशेषज्ञ :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

१६. मणुसगदि० उ० बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०-अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-तस०४-पसत्थवि०-थिरादिछ०-णिमि० णिय०। तं तु० छट्ठाणपदिदं। अप्पसत्थ०४-उप० णिय० अणंतगुणहीणं बं०। तित्थ० सिया०। तं तु० छट्ठाणपदिदं[1]। एवं पसत्थाओ एक्कमेक्केण सह। तं तु० तित्थयरेण सह कादव्वं। चदुसंठा०-चदुसंघ०-उज्जो० ओघं। एवं छसु पुढवीसु। णवरि उज्जोवं उ० बं० तिरिक्ख०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-

---

बन्धक जीव पंचेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्तवर्ण चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगतिके समान हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६. मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पंचेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे एक दूसरेके साथ सन्निकर्ष कहना चाहिए। किन्तु वह तीर्थङ्कर प्रकृतिके साथ कहना चाहिए। चार संस्थान, चार संहनन, और उद्योतका भङ्ग ओघके समान है। अर्थात् इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान कहना चाहिए। इसी प्रकार प्रथमादि छह पृथिवियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उद्योतके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क,

---

१ आ० प्रतौ सिया०। छट्ठाणपदिदं इति पाठः।

तिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि०[1] णिय० अणंतगुणहीणं० । छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-छयुगल० सिया अणंतगुणहीणं । सत्तमाए णिरयोघं । णवरि दोसंठा०-दोसंघ० उ० बं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० णिय० अणंतगुणहीणं० ।

१७. तिरिक्खेसु सत्तण्णं कम्माणं ओघं । णिरयगदि० उ० बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-वेउव्वि०-अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं० । हुंड०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पस०-अथिरादिछ० णिय० । तं तु० छट्ठाणपदिदं । एवं णिरगदिभंगो अप्पसत्थाणं ।

१८. तिरिक्खग० उ० बं० एइंदि०-तिरिक्खाणु०-थावरादि०४ णिय० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं० । एवं तिरिक्खगदिभंगो एइंदि०-तिरिक्खाणु०-थावरादि०४ ।

१९. मणुसग० उ० बं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थापसत्थ०[2]४-

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। सातवीं पृथिवीमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि दो संस्थान और दो संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है।

१७. तिर्यञ्चोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार नरकगतिकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान अप्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१८. तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और स्थावर आदि चारका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगतिकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान एकेन्द्रिय जाति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और स्थावर आदि चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१९. मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर,

१ आ० प्रतौ अगु० ४ तस० णिमि इति पाठः। २ आ० प्रतौ तेजाक० पसत्थापसत्थ० इति पाठः।

अगु०४–पसत्थ०-तस०४–सुभग-सुस्सर--आदे०--णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० णि० । तं तु० छट्ठाणपदिदं । तिण्णियुग० सिया० अणंतगुणहीणं० । एवं मणुसगदिभंगो ओरालि०-ओरालि०-अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० ।

२०. देवगदि० उ० बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०-अंगो०-पसत्थ०४–देवाणु०-अगु०३–पसत्थ०-तस०४–थिरादिछ०-णिमि० णिय० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । अप्पसत्थ०४–उप० णि० अणंतगुणहीणं० । एवं पसत्थाणं देवगदीए सह एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

मार्गदर्शक :- [illegible] तिरिक्ख०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि० अंगो०-पसत्थापसत्थ०४–तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर-अपज्ज०-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं० । असंप० णि० । तं तु० छट्ठाण-पदिदं० । एवं असंप० । तीइंदि०-चदुरिंदि० ओघं । चदुसंठा०-चदुसंघ०-

---

कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार मनुष्यगतिकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२०. देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु त्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण का नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार प्रशस्त प्रकृतियोंका देवगति के साथ विवक्षित प्रकृतिकी मुख्यतासे परस्पर सन्निकर्ष कहना चाहिए। किन्तु विवक्षित प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो उसी प्रकार बन्ध करता है जिस प्रकर देवगतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहा है।

२१. द्वीन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है या अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिए हुए होता है। इसी प्रकार असम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रियजातिकी

आदाव० ओघं। उज्जोवं पढमपुढविभंगो। एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३।

२२. तस्सेव अपज्जत्तेसु छण्णं कम्माणं ओघं। मिच्छत्तं ओघं। एवं सोलसक०-पंचणोक०। इत्थि० उ० बं० मिच्छत्त-सोलसक०-भय०-दु०[1] णिय० अणंतगुणहीणं। हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया अणंतगुणहीणं०। एवं पुरिस०। हस्स० उ० बं० मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दु० णिय० अणु० अणंतगुणहीणं०। रदि० णिय० तं तु० छट्ठाणपदिदं०। एवं रदीए।

२३. तिरिक्ख० उ० बं० एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादि०पंच[2] णि०। तं तु० छट्ठाणपदिदं०। ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु० णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं०। एवं तिरिक्खगदिभंगो एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादिपंच०।

२४. मणुसगदि० उ० बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०-अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ० ४-मणुसाणु०-अगु० ३-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिछ०-

मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। चार संस्थान, चार संहनन और आतपकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष पहली पृथिवीके समान है। इसी प्रकार अर्थात् सामान्य तिर्यञ्चोंके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए।

२२. तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें छह कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सोलह कषाय और पाँच नोकषायोंकी मुख्यतासे जानना चाहिए। स्त्रीवेदके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। रतिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इसके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हीन अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अर्थात् हास्यके समान रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२३ तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर आदि चार और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगतिके समान एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्ण-चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर आदि चार और अस्थिर आदि पाँचकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४. मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन

१. आ० प्रतौ सोलसक० भयदु० इति पाठः। २ आ० प्रतौ० अथिरादिछ० इति पाठः।

णिमि० णि० । तं० तु० छट्ठाणपदिदं । अप्पसत्थ०४–उप० णि० अणंतगुणहीणं० । एवं पसत्थाणं सव्वाणं मणुसगदीए सह एक्कमेक्कस्स । तं तु० छट्ठाणपदिदं । बीइंदियजादि० जोणिणिभंगो । तीइंदि०-चदुरिंदि० ओघं ।

२५. णग्गोद० उ० बं० पंचिंदि०–ओरालि०–तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४–अगु०४–अप्पसत्थवि०-तस०४–दूभग-दुस्सर-अणादे०-णिमि० णि० अणंतगुणहीणं० । तिरिक्ख०-मणुस०-चदुसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस-अजस० सिया अणंतगुणहीणं० । एवं सादि० । णवरि तिण्णिसंघ० सिया० अणंतगुणहीणं । एवं खुज्जसंठा० । णवरि दोसंघ० सिया० अणंतगुणहीणं । एवं वामण० । णवरि असंपत्तसे० सिया० अणंतगुणहीणं । यथा संठाणं तथा संघडणं । असंप० बीइंदियभंगो । आदाउज्जो० पंचिंदियतिरिक्खभंगो ।

प्रशस्त वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार सब प्रशस्त प्रकृतियोंका मनुष्यगतिके साथ परस्पर सन्निकर्ष कहना चाहिए। किन्तु उनका परस्पर उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध होता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। द्वीन्द्रियजाति की मुख्यतासे सन्निकर्ष जिस प्रकार तिर्यञ्चयोनिनीके कह आये हैं उसी प्रकार यहां भी कहना चाहिए। त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रियजातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

२५. न्यग्रोधसंस्थानके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीवपञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक-शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अर्थात् न्यग्रोधसंस्थानके समान स्वातिसंस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह तीन संहननोंका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार कुब्जक संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह दो संहननोंका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। यहां संस्थानोंकी मुख्यतासे जिस प्रकार सन्निकर्ष कहा है उसी प्रकार संहननोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मात्र असम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष द्वीन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान है। आतप और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जिस प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके कह आये हैं उसी प्रकार यहां भी कहना चाहिए।

२६. अप्पसत्थ० उ० बं० तिरिक्ख०-बीइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-असंपत्तासेवट्ट०-वण्ण४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०-दूभ०-अणादे०-णिमि० णि० अणंतगुणहीणं। उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० अणंतगुणहीणं०। दुस्सर० णि०। तं तु छट्ठाणपदिदं०। एवं दुस्सर०। एवं अपज्जत्ताणं सव्वविगलिंदि०-पुढवि०-आउ०-वणप्फदि-बादरपत्ते०-णियोद०।

२७. मणुसेसु खविगाणं ओघं। सेसाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो।

२८. देवेसु सत्तण्णं कम्माणं ओघं। तिरिक्ख० उ० बं० एइंदि०-असंप०-अप्पसत्थ०-थावर०-दुस्सर० सिया०। तं तु छट्ठाणप०। पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगुणहीणं। ओरालि०-तेजा०-क० पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं०। हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच० णिय० तं तु छट्ठाणपदिदं। एवं तिरिक्खगदिभंगो

२६. अप्रशस्त विहायोगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, द्वीन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, दुर्भग, अनादेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। दुःस्वरका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अर्थात् अप्रशस्त विहायोगतिके समान दुःस्वरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसी प्रकार अर्थात् पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान सब अपर्याप्तक, सब विकलेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, जलकायिक, वनस्पतिकायिक बादर प्रत्येक और निगोद जीवोंके जानना चाहिए।

२७. मनुष्योंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है और शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पंचेन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान है।

२८. देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगतिके समान हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पाँचकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एक प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव इन्हींमेंसे

हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०अथिरादिपंच० । मणुसगदिसंजुत्ताओ पसत्थाओ णिरयभंगो । एइंदि०-आदाव-थावरं ओघं । चदुसंठा०-चदुसंघ० ओघं ।

२९. असंप उ० बं० तिरिक्ख०-हुंडस०-अप्पस०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पस०-अथिरादिछ० णि० । तं तु० । पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि-अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि० अणंतगुणहीणं । उज्जो० सिया० अणंतगुणहीणं । एवं अप्पसत्थविहायगदी । दुस्सर०-उज्जोव० पढमपुढविभंगो ।

३०. भवणवासिय-वाणवें०-जोदिसि०-सोधम्मीसाणं सत्तं ओघं । तिरिक्ख गदि० उ० बं० एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर०-अथिरादिपंच णियमा । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्तेग०-णिमि० णि० अणंतगु० । आदाउ० सिया० अणंतगुणहीणं० ।

३१. असंप० उ० बं० तिरिक्ख०-पंचिं०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०-

---

शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है। यदि उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। मनुष्यगति संयुक्त प्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग जिस प्रकार नरकगतिमें कह आये हैं उसी प्रकार यहां भी कहना चाहिए। एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। चार संस्थान और चार संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

२९. असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुंडसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अप्रशस्त विहायोगतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। दुःस्वर और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष प्रथम पृथिवीके समान जानना चाहिए।

३०. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म-ऐशान तकके देवोंमें सात कर्मोंका भंग ओघके समान है। तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माण का नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणेहीन अनुभागको लिये हुए होता है।

३१. असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पंचेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक

---

१. ता० प्रतौ सोधम्मी० तस्स ओघं, आ० प्रतौ सोधम्मीसाणंतस्स ओघं इति पाठः ।

अंगो०-पसत्थापसत्थवण्ण०४-[तिरिक्खाणु०-] अगु०४-तस०४-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं। उज्जो० सिया० अणंतगुणहीणं। अप्पसत्थ०-दुस्सर० णिय०। तं तु०। एवं अप्पसत्थवि०-दुस्सर०। सेसं देवोघं।

३२. सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति विदियपुढविभंगो। आणद याव णव-गेवज्जा त्ति सो चेव भंगो। णवरि तिरिक्खगदिदुगं उज्जोवं वज्ज। अणुदिस याव सव्वट्ठ त्ति छण्णं कम्माणं ओघं। अप्पच्चक्खाणकोध० उ० बं० एक्कारसकसाय-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दु० णिय०। तं तु छट्ठाणपदिदं०। एवमण्णमण्णाणं। तं तु०।

३३. हस्स० उ० बं० बारसक०-पुरिसवे०-भय-दु० णिय० अणंतगुणहीणं०। रदि० णि०। तं तु०। एवं रदीए०। मणुसगदि० देवोघं। एवं पसत्थाओ सव्वाओ।

आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अर्थात् असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके समान अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष भङ्ग सामान्य देवोंके समान है।

३२. सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें वही भङ्ग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्च-गतिद्विक और उद्योतको छोड़कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें छह कर्मोंका भंग ओघके समान है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव ग्यारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उनका उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता यदि अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष होता है जो उत्कृष्ट अनुभाग बन्धरूप भी होता है। और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्धरूप भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्धरूप होता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है।

३३. हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। रतिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग का भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अर्थात् हास्यके समान रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंमें जिस प्रकार कह आये हैं उस प्रकार जानना चाहिए। इसी प्रकार अर्थात् मनुष्यगतिके समान सब प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

३४. अप्पसत्थवण्ण० उ०[1] बं० मणुस०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० बं० अणंतगुणहीणं० । अप्पसत्थगंध०३-उप०-अथिर-असुभ-अजस० णि० । तं तु छट्ठाणपदिदं० । एवमण्णमण्णस्स । तं तु० । तित्थ० सिया० अणंतगुणहीणं० ।

३५. एइंदिएसु सत्तण्णं कम्माणं पंचिंदि०तिरि०अपज्ज०भंगो । पंचिंदि० उ० बं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० सिया अणंतगुणहीणं० । मणुसग०-मणुसाणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०-वज्जरि०-पसत्थ०४-अगु० ३-पसत्थ०-तस० ४-थिरादिछ०-णिमि० णि० तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप० णिय० अणंतगुणहीणं० । एवं पंचिंदियभंगो पसत्थाणं सव्वाणं । मणुस०-मणुसाणु०वज्जरि०सेसाणं पंचिंदि०तिरिक्खअपज्जत्तभंगो । एवं सव्वएइंदियाणं० ।

---

३४. अप्रशस्त वर्णके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति पंचेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। अप्रशस्त गन्धआदि तीन, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार इन अशुभ प्रकृतियोंकी मुख्यतासे परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एक प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करनेवाला जीव उन्हींमेंसे शेष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिए हुए होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिए हुए होता है।

३५. एकेन्द्रियोंमें सात कर्मोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। पञ्चेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान सब प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और वज्रर्षभनाराचसंहनन तथा शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे

---

१ आ० प्रतौ–वण्ण० ४ उ० इति पाठः ।

तेउ०-वाउका० एइंदियभंगो०। णवरि तिरिक्खगदि०-तिरिक्खाणु० धुवभंगो। पसत्थाणं उज्जो० सिया०। तं तु०।

३६. पंचिंदि०-तस०२ ओघभंगो। एवं पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-कोधादि४-अचक्खु०-भवसि०-सण्णि-आहारग त्ति। ओरालि० मणुसभंगो।

३७. ओरालियमि० सत्तण्णं कम्माणं अपज्जत्तभंगो। तिरिक्ख०-चदुजा०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावरादि०४-अथिरादिछ[1]० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो। मणुसगदिपंचगं पंचि०-तिरिक्खभंगो। देवगदि उ० बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि० अंगो०-पसत्थ०४-देवाणु०-अगु० ३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णिय०। तं तु०। अप्पसत्थ०४-उप० णि० अणंतगुणहीणं०। तित्थ० सिया०। तं तु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स तं तु०।

३८. वेउव्वियका०-वेउव्वियमि० देवोघं। णवरि उज्जो० मूलोघं। आहार०-

---

सन्निकर्ष पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। इसी प्रकार सब एकेन्द्रियोंके जानना चाहिए। अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें एकेन्द्रियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ध्रुवभङ्गके समान है। प्रशस्त प्रकृतियों और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है, किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिए हुए होता है।

३६. पंचेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इसी प्रकार पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए। औदारिककाययोगी जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है।

३७. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भंग अपर्याप्तकोंके समान है। तिर्यञ्चगति, चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर आदि चार और अस्थिर आदि छहका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। मनुष्यगतिपञ्चकका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३८. वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान

---

१. आ० प्रतौ थिरादिछ० इति पाठः।

आहारमि० छण्णं कम्माणं सव्वट्ठ०भंगो। कोधसंज० उ० बं० तिण्णिसंज०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय०-दु० णिय०। तं तु०। एवमेक्कमेक्कस्स। तं तु०।

३९. हस्स० उ० बं० चदुसंज०-पुरिस०-भय०-दु० णि० अणंतगुणहीणं०। रदि० णि०। तं तु०। एवं रदीए।

४०. देवगदि० उ० बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०-अंगो०-पसत्थवण्ण०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि०। तं तु०। अप्पसत्थवण्ण०४[1]-उपघा० णि० अणंतगुणहीणं०। तित्थ० सिया०। तं तु०। एवं पसत्थाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०।

४१. अप्पसत्थवण्ण० उ० बं० देवगदि०-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-

भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि उद्योतका भंग मूलोघके समान है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें छह कर्मोंका भङ्ग सर्वार्थसिद्धिके समान है। क्रोध संज्वलनके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलन, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है।

३९. हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। रतिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४०. देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग का भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार प्रशस्त प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव इन्हींमेंसे शेषका उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है।

४१. अप्रशस्त वर्णके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पंचेन्द्रिय जाति,

---

१. आ० प्रतौ अप्पसत्थवण्ण० ४ इति पाठः।

समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थ०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तसं०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० णि० अणंतगुणहीणं०। अप्पसत्थबंध०३-उप०-अथिर-असुभ-अजस० णि०। तं तु०। तित्थ० सिया० अणंतगुणहीणं०। एवं अप्पसत्थबंध०३-[उप०-] अथिर-असुभ-अजस०।

४२. कम्मइ० सत्तण्णं कम्माणं ओघं। तिरिक्ख० उ० बं० एइंदि०-असंप०-अप्पसत्थवि०-थावर-सुहुम-अपज्ज०-साधार०-दुस्सर० सिया०। तं तु०। पंचिं०-ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तस०४ सिया० अणंतगुणहीणं०।ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-णिमि० णिय० अणंतगु०। हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच० णि०। तं तु०। एवं तिरिक्खगदिभंगो हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच०। मणुसग० उ० बं० णिरयोघं। एवं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु०। देवगदि०४ ओरालियमिस्स०भंगो।

वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। अप्रशस्त गन्ध तीन, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अर्थात् अप्रशस्त वर्णके समान अप्रशस्त गन्ध आदि तीन, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४२. कार्मणकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत और त्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभाग रूप होता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभाग रूप होता है। हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगतिके समान हुण्डक संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पाँचकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागबन्धकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य नारकियोंके जिसप्रकार कह आये हैं उस प्रकार जानना चाहिए। इसी प्रकार औदारिकशरीर, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी

---

१ आ० प्रतौ अगु० ३ तस० इति पाठः। २ ता० प्रतौ अणादे० इति पाठः।

४३. पंचिंदि० उ० बं० मणुसग०-देवग०-दोसरी०-दोअंगो०-वज्जरि०-दो-आणु०-तित्थय० सिया० । तं तु० । तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थ०४-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ-०णिमि० णि० । तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप० णिय० अणंतगु० । एवं पंचिंदियभंगो पसत्थाणं ।

४४. एइंदि० उ० बं० तिरिक्खग०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर-अथिरादिपंच० णि० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-णिमि० णि० अणंतगु० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-बादर-पज्जत्त०-पत्ते० सिया० अणंत-गुणहीणं० । सुहुम०-अपज्ज०-साधार० सिया० । तं तु० । एवं थावर० ।

४५. सुहुम० उ० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर-अपज्ज०-साधार०-अथिरादिपंच० णि० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-

---

मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। देवगति चतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जिसप्रकार कह आये हैं उसप्रकार जानना चाहिए।

४३. पञ्चेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, देवगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभाग का भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान प्रशस्त प्रकृतियों की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४४. एकेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्त-गुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अर्थात् एकेन्द्रिय जातिके समान स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४५. सूक्ष्म प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर, अपर्याप्त, साधारण और

पसत्थ०४-अगु०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं । एवं अपज्ज०-साधार० । सेसं ओघं । तिरिक्ख०-मणुस० एइंदि० सुहुम०-अपज्जत्त०-साधारणसंजुत्तसंकिलेस्स णेरइय० पंचिंदियसंजुत्तसंकिलेस्स त्ति ।

४६. इत्थिवेदेसु सत्तण्णं कम्माणं ओघं । णिरयग० उ० बं०[1] पंचिंदियादिपसत्थाओ ओघं । हुंड०-अप्पसत्थ०४--णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णिय० । तं तु० । एवं णिरयाणु०-अप्पसत्थवि०-दुस्सर० ।

४७. तिरिक्ख० उ० बं० एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर०-अथिरादिपंच० णिय० । तं तु० । ओरालियादिपगदीओ देवोघं । एवं एइंदि०-[हुंड०-अप्पसत्थ०४-]तिरिक्खाणु०-[उप०-]थावर०-[अथिरादिपंच०] । तिण्णि जादि० पंचिं०तिरिक्खजोणिणिभंगो ।

४८. सेसाणं पगदीणं ओघं । णवरि असंप० उ० बं० तिरिक्ख०-ओरालि०-तेजा०-

---

अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार अर्थात् सूक्ष्म प्रकृतिके समान अपर्याप्त और साधारण प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । शेष ओघके समान है । तिर्यञ्च और मनुष्य जीव सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण संयुक्त संक्लेश परिणामोंसे एकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट अनुभागबन्ध करते हैं और पञ्चेन्द्रिय जाति संयुक्त संक्लेश परिणामोंसे नरकगतिका उत्कृष्ट अनुभागबन्ध करते हैं ।

४६. स्त्रीवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । वह हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार अर्थात् नरकगतिके समान नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

४७. तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । औदारिक शरीर आदि प्रकृतियोंका सन्निकर्ष जिस प्रकार सामान्य देवोंमें कह आये हैं उसी प्रकार यहाँ कहना चाहिए । इसी प्रकार एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर और अस्थिर आदि ५ की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तीन जातिकी मुख्यता से सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनीके जिस प्रकार कह आये हैं उस प्रकार है ।

४८. शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि असम्प्राप्तासृपाटिका संह-

---

१. ता० प्रतौ ओघं । उ० बं० इति पाठः ।

क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस०४-अथिरादिपंच-णिमि० णिय० अणंतगु० । बे० सिया० तं तु० । पंचिं०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-अप्पस०-पज्जत्तापज्ज०-दुस्सर० सिया० अणंतगुण० । तिरिक्ख-मणुसिणीओ बेइंदिय-संजुत्तं संकिलेस्सं त्ति । आदाउज्जो० देवोघं ।

४९. चदुसंठा०-चदुसंघ०-अप्पसत्थ०-दुस्सर० ओघं । सुहुम० उ० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं । अपज्जत्त-साधार० णिय० । तं तु० । एवं अपज्जत्त-साधार० ।

५०. पुरिसेसु ओघं ।

५१. णवुंसगे सत्तण्णं कम्माणं ओघं । णिरयगदि० उ० बं० पंचिंदियादिपगदीओ सव्वाओ ओघं । हुंड-अप्पसत्थवण्ण०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णिय० । तं तु० । एवं णिरयाणुपु० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

ननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुंड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। द्वीन्द्रिय जातिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुबन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुबन्ध करता है तो वह नियमसे छह स्थानपतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रिय-जाति, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। तिर्यञ्चयोनिनी और मनुष्यनी संक्लेश परिणामयुक्त द्वीन्द्रिय जातिका बन्ध करती हैं। आतप और उद्योतका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है।

४९. चार संस्थान, चार संहनन, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका भङ्ग ओघके समान है। सूक्ष्म प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। अपर्याप्त और साधारण का नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अपर्याप्त और साधारणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

५०. पुरुषवेदी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है।

५१. नपुंसकवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पञ्चेन्द्रिय जाति आदि सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। वह हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

५२. तिरिक्खगदि० उ० बं० पंचिंदियादिपसत्थाओ अणंतगुणहीणं० । हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णिय० । तं तु छट्ठाणपदिदं० । एवं असंप०-तिरिक्खाणु० ।

५३. एइंदि० उ० बं० थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साधार० णिय० । तं तु० । सेसं णिय० अणंतगुणहीणं । एवं एइंदियभंगो थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साधार० । सेसं ओघं ।

५४. अवगदवेदे० आभिणि० उ० बं० चदुणा० णि० बं० णि० उक्कस्सं । एवं चदुणाणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंतरा० । कोधादि०४ ओघं ।

५५. मदि०-सुद०-विभंग०-मिच्छादि० ओरालि० उ० बं० तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु० सिया० अणंतगुणहीणं० । मणुसगदिदुग-उज्जो० सिया० । तं तु० । पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णिय० अणंतगु० । ओरालि०अंगो०-वज्जरि० णिय० । तं तु० । एवं ओरालि०अंगो०-

---

५२. तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका अनन्तगुणा हीन अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करता है। हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

५३. एकेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार एकेन्द्रिय जातिके समान स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष भङ्ग ओघके समान है।

५४. अपगतवेदी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे उत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। क्रोधादि चार कषायवाले जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है।

५५. मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभङ्गज्ञानी और मिथ्यादृष्टि जीवोंमें औदारिक शरीरके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। मनुष्यगतिद्विक और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध होता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए

वज्जरि० । सेसाणं ओघं आहारदुगं तित्थयरं च वज्ज । णवरि देवगदि० उ० बं० जस० णिय० । तं तु० । एवं सव्वाणं पसत्थाणं[1] ।

५६. आभिणि०-सुद०-ओधि० सत्तण्णं क० उक्कस्स० अणुदिसभंगो[2] । अप्पसत्थवण्ण० उ० बं० मणुसग०-देवग०-ओरालि०-वेउव्वि०-[ओरालि०अंगो०-वेउव्वि०-अंगो०-] वज्जरि०-दोआणु०-तित्थय० सिया० अणंतगु० । पंचिंदियादिपसत्थाओ णिय० अणंतगु० । अप्पसत्थगंध०३-उप०-अथिर-असुभ-अजस० णिय० । तं तु० । एवं एदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० । सेसं ओघं । एवं ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-सम्मामिच्छादि० ।

५७. मणपज्जव० खइयाणं ओघं । सेसाणं आहारका०भंगो । एवं संजद-सामाइ०-छेदोव० । परिहारे आहारकायजोगिभंगो । णवरि आहारदुगं देवगदिभंगो । णवरि

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभनाराच संहननका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । किन्तु आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिको छोड़ कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव यशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु उसका उत्कृष्ट बन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट बन्ध भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार सब प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

५६. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें सात कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागबन्धका सन्निकर्ष अनुदिशके समान है । अप्रशस्त वर्णके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वैक्रियिक, आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । अप्रशस्त गन्ध आदि तीन, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी एकके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव इन्हींमेंसे शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । शेष कथन ओघके समान है । इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिक सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए ।

५७. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें क्षायिक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आहारकाययोगी जीवोंके समान है । इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत और छेदोपस्थाना संयत जीवोंके जानना चाहिए । परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंमें आहारकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि आहारकद्विकका भङ्ग देवगतिके समान है । इतनी और विशेषता है कि

१. ता० प्रतौ पसत्थाणं पसत्थाणं ? इति पाठः । २. आ० प्रतौ उक्कस्स अणुक्कस्सभंगो इति पाठः ।

संजदेसु अप्पसत्थाणं तित्थयरं ण बंधदि। एवं सव्वाणं। सुहुमसंप० अवगतवेदभंगो। संजदासंजद० परिहारभंगो। णवरि अप्पणो पगदीओ णादव्वाओ। असंजदे मदि०भंगो। णवरि तित्थयरं० उ० बं० देवगदि०४ णि० बं०। तं तु०। चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो।

५८. किण्णाए सत्तण्णं कम्माणं ओघं। णिरयगदिदंडओ तिरिक्खगदिदंडओ एइंदियदंडओ[1] णवुंसगदंडगभंगो। मणुसगदिदंडओ णिरयोघं। देवगदि० उ० बं० वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णिय०। तं तु०। तित्थ० सिया०। तं तु०। सेसाणं पसत्थाणं अप्पसत्थाणं च णिय० अणंतगु०। एवं देवगदि०४-तित्थ०। सेसं ओघं।

५९. णील-काऊणं सत्तण्णं क० ओघं। णिरय० उ० बं० णिरयाणु० णिय०। तं तु०। सेसाओ पगदीओ णिय० अणंतगु०। एवं णिरयाणु०। तिरिक्खग० उ० बं० हुंडसंठाणादि० णिरयोघं। सेसाणं किण्णभंगो। काऊए तित्थ० मणुसगदिभंगो।

संयत जीवोंमें अप्रशस्त प्रकृतियोंके साथ तीर्थङ्कर प्रकृतिका बन्ध नहीं करता। इसी प्रकार सबके जानना चाहिए। सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंमें अपगतवेदी जीवोंके समान भङ्ग है। संयतासंयत जीवोंमें परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी प्रकृतियाँ जाननी चाहिए। असंयत जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तीर्थङ्कर प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगतिचतुष्कका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो नियमसे छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भंग है।

५८. कृष्णलेश्यावाले जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। नरकगतिदण्डक, तिर्यञ्चगतिदण्डक और एकेन्द्रिय जाति दण्डकका भङ्ग नपुंसकवेददण्डकके समान है। मनुष्यगतिदण्डकका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। शेष प्रशस्त और अप्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार देवगति चार और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष भङ्ग ओघके समान है।

५९. नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके हुण्डसंस्थान आदिका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग कृष्ण लेश्याके समान है। कापोत लेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है।

१. ता० प्रतौ णिरयगदिदंडओ एइंदियदंडओ इति पाठः।

६०. तेऊए सत्तण्णं कम्माणं ओघं। तिरिक्ख० उ० बं० एइंदि०-हुंडसं०-सोधम्मपढमदंडओ मणुसगदिपंचगस्स ओघं। देवगदिदंडओ परिहार०भंगो। असंप० उ० बं० तिरिक्ख०-पंचिंदियादि-सोधम्मदंडओ अप्पसत्थ०-दुस्सर० णि०। तं तु०। चदुसंठा०-चदुसंघ० सोधम्मभंगो। एवं पम्माए वि। णवरि अप्पसत्थाणं सहस्सार-भंगो। सुक्काए सत्तण्णं कम्माणं मणुसगदिपंचगस्स खविगाणं च ओघं। हुंडगादीणं अप्पसत्थाणं णवगेवज्जभंगो।

६१. अब्भवसि० सत्तण्णं क० ओघं। दुगदि-चदुजादि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थवण्ण०४-दोआणु०-उप०-आदाउज्जोव०-अप्पसत्थ०-थावरादि०४ अथिरादि-छ० ओघं। मणुसगदिपंचग०-देवगदि०४ तिरिक्खोघं। पंचिंदि० उ० बं० दुगदि-दोसरी०-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-उज्जो० सिया०। तं तु०। सेसाओ पगदीओ पसत्थाओ णिय०। तं तु०। अप्पसत्थ०४-उप०-अप्पसत्थाणं णिय० अणंतगुणही०।

६२. सासणेछण्णं कम्माणं ओघं। अणंताणुबं० कोध० उ० बं० पण्णारसक०

६०. पीत लेश्यावाले जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, सौधर्मकल्पसम्बन्धी प्रथम दण्डक और मनुष्यगतिपञ्चकका भङ्ग ओघके समान है। देवगतिदण्डकका भङ्ग परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है। असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागको बाँधनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति आदि सौधर्मदण्डक, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। चार संस्थान और चार संहननका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। इसी प्रकार पद्म लेश्यामें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अप्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रार कल्पके समान है। शुक्ललेश्यामें सात कर्म, मनुष्यगतिपञ्चक और क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। हुण्डक संस्थान आदि अप्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग नौग्रैवेयकके समान है।

६१. अभव्योंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। दो गति, चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, दो आनुपूर्वी, उपघात, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर आदि चार और अस्थिर आदि छहका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगतिपञ्चक और देवगतिचतुष्कका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। पञ्चेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। शेष प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्ण चार, उपघात और अप्रशस्त विहायोगतिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है।

६२. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें छह कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी

१. आ० प्रतौ-पंचग० देवगदिभंगो। देवगदि० इति पाठः।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इत्थि०-अरदि-सोग-भय-दु० णिय०। तं तु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०। पुरिस०-हस्स-रदि ओघं। तिरिक्खग० उ० बं० वामण०-खीलि०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णि०। तं तु०। पंचिंदियादि० णिय० अणंतगु०। उज्जोवं सिया० अणंतगु०। सेसं ओघं। असण्णी० तिरिक्खोघं। णवरि मोह० मणुसअपज्जत्तभंगो। अणाहार० कम्मइगभंगो।

एवं उक्कस्सओ सण्णियासो समत्तो।

६३. जहण्णए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० आभिणिबोधियणाणावरणस्स जहण्णयं अणुभागं बंधंतो चदुणाणाव० णिय० बं०। णिय० जह०। एवमण्णमण्णस्स जहण्णा। एवं पंचण्णं अंतराइयाणं। णिद्दाणिद्दा० जह० अणु० बं० पचलापचला-थीणगि० णिय० बं०। तं तु० छट्ठाणप०। अणंतभागब्भहि०५। छदंसणा०

क्रोधके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पन्द्रह कषाय, स्त्रीवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एक प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। पुरुषवेद, हास्य और रतिका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव वामन संस्थान, कीलक संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। शेष भङ्ग ओघके समान है। असंज्ञी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मोहनीय कर्मका भङ्ग मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

इस प्रकार उत्कृष्ट सन्निकर्ष समाप्त हुआ।

६३. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघकी अपेक्षा आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे जघन्य अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका जघन्य अनुभागबन्धके साथ सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसी प्रकार पाँच अन्तरायका सन्निकर्ष जानना चाहिए। निद्रानिद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव प्रचला-प्रचला और स्त्यानगृद्धिका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य भी होता है और अजघन्य भी होता है। यदि अजघन्य होता है तो छह स्थान पतित वृद्धिको लिये हुए होता है। या तो अनन्तभागवृद्धिरूप होता है या असंख्यातभागवृद्धि आदि पाँच वृद्धिरूप होता है। छह दर्शनावरणका नियमसे बन्ध

१. ता० प्रतौ जह० दुवि० इति पाठः।

णिय० अणंतगुणब्भहि० । एवं पचलापचला-थीणगिद्धि० । णिद्दाए जह० बं० पचला० णिय० । तं तु० छट्ठाण० । चदुदंसणा० णिय० अणंतगुणब्भ० । एवं[1] पचला० । चक्खुदं० ज० बं० तिण्णिदंस० णि० बं० । णि० जहण्णा । एवं तिण्णिदंस० । सादा० जह० बं० असादस्स अबं० । एवं असाद० । एवं चदुआउ०-दोगो० ।

६४. मिच्छ० जह० बं० अणंताणु०४ णि० । तं तु० । बारसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दु० णिय० अणंतगुणब्भ० । एवं अणंताणु०४ । अप्पच्चक्खाणकोध० ज० बं० तिण्णिकसा० णिय० । तं तु० । अट्ठक०-पंचणोक० णिय० अणंतगुणब्भ० । एवं तिण्णिक० । पच्चक्खाणकोध० ज० बं० तिण्णिक० णिय० । तं तु० । चदुसंज०-पंचणोक० णिय० अणंतगुणब्भ० । एवं तिण्णं क० । कोधसंज० ज० बं० तिण्णिसंज० णि० अणंतगु० । माणसंज० ज० बं० दोण्णं संज० णिय० अणंतगुणब्भ० ।

आशीर्वाद — आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

करता है जो अनन्तगुणवृद्धिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। निद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव प्रचलाका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य भी होता है और अजघन्य भी होता है। यदि अजघन्य होता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। चार दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार प्रचलाकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। चक्षुदर्शनावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे जघन्य होता है। इसी प्रकार तीन दर्शनावरणकी मुख्यतासे जानना चाहिए। सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव असातावेदनीयका बन्ध नहीं करता। इसी प्रकार असातावेदनीयकी अपेक्षा जानना चाहिए। इसी प्रकार चार आयु और दो गोत्रके सम्बन्धमें जानना चाहिए।

६४. मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव अनन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। बारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणी वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन कषायोंका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। आठ कषाय और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार अप्रत्याख्यान मान आदि तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। प्रत्याख्यानावरण क्रोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष तीन कषायोंका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी करता है। यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। चार संज्वलन और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शेष तीन प्रत्याख्यानावरण कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। क्रोधसंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलनोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता

१. ता० आ० प्रत्योः छट्ठाण० । चदुसंज० णिय० अणंतगुणब्भ० । एवं इति पाठः । २. ता० आ० प्रत्योः तिण्णिसंज० णि० अणंतगु० । माणसंज० ज० बं० तिण्णिसंज० णिय० अणंतगु० । माणसंज० इति पाठः ।

मायसंज० ज० बं० लोभसंज० णिय० अणंतगुणब्भ० । लोभसंज० ज० बं० सेसाणं अबंध० । इत्थि० ज० बं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० अणंतगुणब्भ० । हस्स-रदि०-अरदि-सोग० सिया अणंतगुणब्भ० । एवं णवुंस० । पुरिस० ज० बं० चदुसंज० णिय० अणंतगुणब्भ० । हस्स० ज० बं० चदुसंज०-पुरिस० णिय० अणंतगुणब्भ० [illegible] । तं तु० । एवं रदि-भय-दु[1]० । अरदि० ज० बं० चदुसंज०--पुरिस०--भय-दु० णिय० अणंतगुणब्भ० । सोग० णिय० । तं तु० । एवं सोग० ।

६५. णिरयगदि ज० बं० पंचिंदि०--वेउव्वि०--तेजा०--क०--वेउव्वि०अंगो०--पसत्थापसत्थवण्ण०४--अगु०४--तस०४--णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । हुंड०--णिरयाणुपु०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णिय० । तं तु० । एवं णिरयाणु० । तिरिक्ख० ज० बं० पंचिंदि०-ओरालि०--तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्था-

है। मानसंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो संज्वलनोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। मायासंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव लोभसंज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। लोभसंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष संज्वलनोंका अबन्धक होता है। स्त्रीवेदके जघन्य अनुभाग का बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। पुरुषवेदसे जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। हास्यके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। रति, भय और जुगुप्सा का नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी करता है। यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार रति, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। शोकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी करता है। यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६५. नरकगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। हुण्डसंस्थान, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी करता है। यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, सम-

१. आ० प्रतौ एवं रदीए भयदु० इति पाठः।

पसत्थ०४–अगु०४–पसत्थ०–तस०४–थिरादिछ०–णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । तिरिक्खाणु० णि० । तं तु० । उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं तिरिक्खाणु० । मणुसगदि० ज० बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४ अगु०-उप०-तस०-बादर०-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-अपज्ज०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । मणुसाणु० णि० । तं तु० । पर०-उस्सा०-पज्ज० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं मणुसाणु० । देवगदि०-ज० बं० पंचिंदि०—वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४–अगु०४–तस०४–णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । समचदु०-देवाणु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० णिय० । तं तु० । थिराथिर–सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । एवं देवाणु० ।

चतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी करता है। यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, अपर्याप्त और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। परघात, उच्छ्वास और पर्याप्तका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। समचतुरस्रसंस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६६. एइंदि० ज० बं० तिरिक्ख०-ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भहियं० । हुंड०-थावर-दूभग-अणादे० णि० । तं तु० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-बादर-पज्जत्त-पत्ते० सिया० अणंतगुणब्भ० । सुहुम-अपज्ज०-साधार०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । एवं थावरं । बीइंदि० ज० बं० तिरिक्ख०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर०-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भहियं० । हुंड०-असंप०-दूभग०-अणादे० णि० । तं तु० । पर०-उस्सा०-उज्जो०-पज्ज० सिया० अणंतगुण० । अप्पसत्थ०-अपज्ज०-थिराथिर०-सुभासुभ-दुस्सर-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । एवं तीइंदि०-चदुरिं० । पंचिंदि० ज० बं० णिरय०-तिरिक्खग०-असंपत्त०-दोआणु० सिया० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०-वेउव्वि०-दोअंगो०-उज्जो० सिया० । तं तु० । तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि० ।

६६. एकेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। हुण्डसंस्थान, स्थावर, दुर्भग और अनादेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। द्वीन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दुर्भग और अनादेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। परघात, उच्छ्वास, उद्योत और पर्याप्तका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त विहायोगति, अपर्याप्त, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुःस्वर, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रियजातिकी मुख्यतासे जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, तिर्यञ्चगति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान

तं तु० । हुंड०-अप्पसत्थ०४-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णि० अणंतगुणब्भ० । एवं तस० ।

६७. ओरालि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अथिरादिपंच० णिय० अणंतगुणब्भहियं० । एइंदि०-असंपत्त०-अप्पस०-थावर०-दुस्सर० सिया० अणंतगुणब्भहि० । पंचिं०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० । तं तु० । तेजा० क०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० । तं तु० । एवं उज्जो० । वेउव्वि० ज० बं० णिरय०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णियं० अणंतगुणब्भहियं० । पंचिंदि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०-अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । एवं वेउव्वि०अंगो० । आहार० ज० बं० देवगदि०-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है, जो तं तु रूप होता है। हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार त्रसप्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६७. औदारिक शरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। जो जघन्य व अजघन्य अनुभाग बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। वैक्रियिक शरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। आहारकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त

१. ता० प्रतौ अथिरादिछ० णिमि० णिय० इति पाठः।

णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । आहार०अंगो० णि० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं आहारअंगो[1] ० । तेजा० जह० बंधे[2] णिरय०-तिरिक्ख०-एइंदि०-असंप०-दोआणु०-अप्पसत्थ०-थावर-दुस्सर० सिया० अणंतगु० । पंचिंदि०-दोसरी०-दोअंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० । तं तु० । कम्मइ०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णिय० । तं तु० । हुंड०-अप्पसत्थवण्ण०४-उप[3]०-अथिरादिपंच० णि० बं० अणंतगुणब्भहियं० । एवं कम्मइ०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

६८. समचदु० ज० बं० तिरिक्ख०-दोसरीर०-दोअंगो०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० अणंतगु० । मणुसग०-देवग०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । पंचिंदि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । एवं समचदुर०भंगो पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० । णग्गोद०

विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। आहारक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार आहारक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तैजसशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है। कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचार, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माण का नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार कार्मणशरीर, प्रशस्त, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६८. समचतुरस्रसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगति, देवगति, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार समचतुरस्रसंस्थानके समान प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और

१. ता० प्रतौ आहारमं० (अं) गो०, आ० प्रतौ आहारभंगो० इति पाठः। २. आ० प्रतौ तेजाक० बंध० इति पाठः। ३. ता० आ० प्रत्योः असंपत्तवण्ण० ४ उप० इति पाठः।

ज० बं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ०। मणुस०-छस्संघ०-मणुसाणु०-दोविहा०-थिरादिछयुग० सिया०। तं तु०। पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ०। एवं तिण्णिसंठाणं पंचसंघ०। हुंडसं० ज० बं० णिरय०-मणुस०-चदुजादि०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थावरादि४-थिरादिछयुग० सिया०। तं तु०। तिरिक्ख०-पंचिंदि०-दोसरीर-दोअंगो०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तस०४ सिया० अणंतगुणब्भ०। तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ०। एवं दूभग-अणादे०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

६९. ओरालि०अंगो० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पस०-अथिरादिछ० णिय० अणंतगुणब्भ०। पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिय०। तं तु०। उज्जोवं सिया०। तं तु०।

आदेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगति, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तीन संस्थान और पाँच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। हुण्डसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, मनुष्यगति, चार जाति, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि वह बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रियजाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, और त्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार दुर्भग और अनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६९. औदारिक आङ्गोपाङ्गके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है

७०. असंप० ज० बं० तिरिक्ख०-पंचिंदि०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-पज्ज० सिया० अणंतगुणब्भ० । मणुसगदि-तिण्णिजादि-छसंठा०-मणुसाणु०-दोविहा०-अपज्ज०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-तस०-बादर-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

७१. अप्पसत्थवण्ण० ज० बं० देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थवण्ण०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । आहारदुगं तित्थय० सिया० अणंतगुणब्भ० । अप्पसत्थगंध-रस-पस्स०-उप० णि० । तं तु० । एवं अप्पसत्थगंध-रस-पस्स०-उप० । यथा गदी तथा आणुपुव्वी ।

७२. आदाव० ज० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थवण्ण०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर०-अथिरादिपंच० णिय० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०-तेजा०-क०-

---

तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है ।

७०. असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, उद्योत और पर्याप्तका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । मनुष्यगति, तीन जाति, छह संस्थान, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विहायोगति, अपर्याप्त और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

७१. अप्रशस्त वर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । आहारकद्विक और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । अप्रशस्त गन्ध, अप्रशस्त रस, अप्रशस्त वर्ण और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार अप्रशस्त गन्ध, रस व स्पर्श और उपघातकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । गतियोंकी मुख्यतासे जिस प्रकार सन्निकर्ष कह आये हैं उसी प्रकार आनुपूर्वियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

७२. आतपके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर,

---

१. आ० प्रतौ छस्संघ० इति पाठः । २. ता० प्रतौ अप्पसत्थगंधस्स पस० उप० इति पाठः ।

पसत्थ०४–अगु०३–बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णिय० । तं तु० । उज्जोवं ओरालिय-भंगो० ।

७३. अप्पसत्थवि० ज० बं० णिरय०-मणुस०-३जादि०-छस्संठा०-छस्संघ०-दो-आणु०-थिरादिछयु० सिया० । तं तु० । तिरिक्ख०-पंचिंदि०-दोसरी०-दोअंगो०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४–अगु०४–तस०४–णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । एवं दुस्सर० ।

७४. सुहुम० ज० बं० तिरिक्ख०–ओरालि०–तेजा०–क०-पसत्थापसत्थ०४–तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । एइंदि०-हुंड०-थावर०-दूभ०-अणादे०-अजस० णिय० । तं तु० । पर०-उस्सा०-पज्जत्त०-पत्ते० सिया० अणंतगुणब्भ० । अपज्ज०-साधा०-थिराथिर०-सुभासुभ० सिया० । तं तु० । एवं साधार० ।

७५. अपज्ज० ज० बं० तिरिक्ख०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-तिरिक्ख०-तस०-

कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । उद्योतका भङ्ग औदारिकशरीरके समान है । [illegible] जी महाराज

७३. अप्रशस्त विहायोगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, मनुष्यगति, तीन जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार दुःस्वरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

७४. सूक्ष्मप्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, स्थावर, दुर्भग, अनादेय और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । अपर्याप्त, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ और अशुभका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार साधारण प्रकृतिकी मुख्यतासे जानना चाहिए ।

७५. अपर्याप्त प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय-

१. आ० प्रतौ सुभासुभ० सिया० तं तु० तिरिक्ख० इति पाठः ।

बादर-पत्ते० सिया० अणंतगुणब्भ० । मणुस०-चदुजादि०-असंप०-मणुसाणु०-थावर०-सुहुम०-साधार० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । हुंड०-अथिरादिपंच णि० । तं तु० ।

७६. थिर०ज० बं० तिरिक्ख०-पंचिंदि०-दोसरी०-दोअंगो०-तिरिक्खाणु०-आदा-उज्जो०-तस०४-तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । मणुसग०-देवग०-चदुजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थावर०-सुहुम०-साधार०-सुभादिपंचयुग० सिया० । तं तु० । तेजा०-कम्म०-पसत्थापसत्थ०४-पज्ज०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । बादर-पत्तेय० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं सुभ०-जसगि० । णवरि जस०-सुहुम-साधारणं वज्जं ।

७७. अथिर० ज० बं० णिरय-देवगदि-मणुसगदि-चदुजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-दोविहा०-थावरादि४-सुभादिपंचयुग० सिया० । तं तु० । तिरिक्ख०-

योगदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्रस, बादर और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगति, चार जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। हुण्डसंस्थान, और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

७६. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रियजाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, त्रसचतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगति, देवगति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण और शुभादि पाँच युगलोंका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो यह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, पर्याप्त और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। बादर और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिके भङ्गमें स्थावर, सूक्ष्म और साधारणको छोड़ देना चाहिए।

७७. अस्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, देवगति, मनुष्यगति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार और शुभादि पाँच युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय-

१. ता० प्रतौ णिमि० अणंतगुण० इति पाठः ।

पंचिंदि०-दोसरीर-दोअंगो०-तिरिक्खाणु०- पर०-उस्सा०-आदावुज्जो०-तस०४-तित्थं० सिया० अणंतगुणब्भ०। तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय०अणंतगुणब्भ०। एवं असुभ-अजस०।

७८. तित्थय० ज० बं० देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०--समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०-४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदे०-अजस०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भहियं बंधदि।

७९. णिरएसु आभिणिबोधि० ज० अणु० बं० चदुणाणा० णिय०। तं तु०। एवमण्णमण्णस्स। एवं पंचंतराइ०। णिद्दाणिद्दाए ज० बं० पचलापचला-थीणगि० णि०। तं तु०। छदंसणा० णि० अणंतगुणब्भ०। एवं पचलापचला-थीणगि०। णिद्दा० ज० बं० पंचदंस० णि०। तं तु०। एवमण्णमण्णस्स। तं तु०। वेदणीय-आउग-गोद० ओघं।

जाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, त्रस चतुष्क और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

७८. तीर्थङ्कर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस-चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माणका नियमसे बन्ध होता है जो अनन्तगुणा अधिक बाँधता है।

७९. नारकियोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसी प्रकार पाँच अन्तरायका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। निद्रानिद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि वह अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। छह दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रचला और स्त्यान-गृद्धिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। निद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। वेदनीय, आयु

१. आ० प्रतौ आदावुज्जो० तित्थ० इति पाठः। २. आ० प्रतौ थिणगि०३ इति पाठः।

८०. मिच्छ० ज० बं० अणंताणु०४ णि० बं० । तं० तु० । बारसक०-पंचणोक० णि० अणंतगुणब्भहियं० । एवं अणंताणु०४ । अपच्चक्खा०कोध० ज० बं० एक्कारसक०-पंचणोक० णि० । तं तु० । एवमण्णमण्णस्स । तं तु० । इत्थि० ज० बं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु० णिय० अणंतगुणब्भहि० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं णवुंस० । अरदि० ज० बं० बारसक०-पुरिस०-भय-दु०-णिय० अणंतगुणब्भ० । सोग० णि० । तं तु० । एवं सोग० ।

८१. तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० ओघं । मणुसग०-मणुसाणु० ओघं । णवरि अपज्जत्तं वज्ज । पंचिंदि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ० णिय० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिय० । तं तु० । उज्जो०

और गोत्र कर्मका भङ्ग ओघके समान है। आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

८०. मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव अनन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। बारह कषाय और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव ग्यारह कषाय और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। शोकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

८१. तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है। तथा मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अपर्याप्तको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क, और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी

१. ता० आ० प्रत्योः अणंताणु०४ णिमि० णि० इति पाठः।

सिया० । तं तु० । एवं एदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० । छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-छयुगल०--तित्थय० ओघं । अप्पसत्थवण्ण० ज० बं० मणुस०-पंचिंदि०-तिण्णिसरीर-समचदु०--ओरालि०अंगो०---वज्जरि०---पसत्थव०४—मणुसाणु०--अगु०३---पसत्थ०--तस०४--थिरादिछ०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । अप्पसत्थगंध०३—उप० णिय० । तं तु० । एवं एदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० । छसु उवरिमासु तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० मणुसगदिभंगो । सेसं णिरयोघं ।

८२. सत्तमाए तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० ओघं । मणुसग० ज० बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४—अगु०४—पसत्थ०--तस०४—अथिर-असुभ-सुभग--सुस्सर--आदे०—अजस०--णिमि० णि० अणंत-गुणब्भ० । मणुसाणु० णि० । तं तु० । एवं मणुसाणु० । पंचिंदियदंडओ णिरयोघं ।

बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभाग का बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एक प्रकृतिका बन्ध करनेवाला जीव शेषके जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, छह युगल और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। अप्रशस्त वर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, तीन शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त गन्धत्रिक और उपघातका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमें से किसी एकका बन्ध करनेवाला जीव शेषका उसी प्रकार बन्ध करता है जिस प्रकार अप्रशस्त वर्णकी मुख्यतासे कह आये हैं। ऊपरकी छह पृथिवियोंमें तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका भङ्ग मनुष्यगतिके समान जानना चाहिए। शेष भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है।

८२. सातवीं पृथिवीमें तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस-शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रियजाति दण्डकका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है।

१ ता० आ० प्रत्योः तं तु० सिया० अणंतगु० एवं इति पाठः ।

८३. समचदु० ज० बं० तिरिक्ख०-पंचिं०-ओरालि०-तेजा०-क०--ओरालि०-अंगो०---पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०---अगु०४--तस०४--णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । छस्संघ०--दोविहा०--थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं पंचसंठा०-छस्संघ०-दोविहा०-मज्झिल्लाणि युगलाणि । थिर० ज० बं० तिरिक्ख०--मणुस०--दोआणु०--उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । पंचिंदियदंडओ णिय० अणंतगुणब्भ० । छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-सुभगादिपंचयुग० सिया० । तं तु० । एवं अथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० । सेसाणं णिरयोघं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

८४. तिरिक्खेसु छण्णं कम्माणं णिरयोघभंगो । मोहणीयं ओघो । णवरि पच्चक्खाण०कोध० ज० बं० सत्तक०-पंचणोक० णिय० । तं तु० । एवमण्णमण्णस्स । तं तु० । अरदि० ज० बं० अट्ठक०-पुरिस०-भय०-दु० णिय० अणंतगुणब्भ० । सोग० णि० । तं तु० । एवं सोग० ।

८३. समचतुरस्रसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु यह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसीप्रकार पाँच संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और मध्यके तीन युगलोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रियजातिदण्डकका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और सुभग आदि पाँच युगलका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है।

८४. तिर्यञ्चोंमें छह कर्मोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। मोहनीय कर्मका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि प्रत्याख्यानावरण क्रोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सात कषाय और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है। जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव आठ कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनंतगुणा अधिक होता है। शोकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनु-

८५. चदुग०-चदुजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-चदुआणु०-दोविहा०-थावरादि०४-थिरादिछयुग० ओघं। पंचिंदि० ज० बं० णिरय०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णिय० अणंतगुणब्भ०। वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि० अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि०। तं तु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

८६. ओरालि० ज० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादिपंच-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ०। ओरालि०अंगो० ज० बं० तिरिक्ख०-बेइंदि०-ओरालि०-तेजा०-हुंड०-असंप०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर-अपज्ज०-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ०।

८७. आदाव० ज० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थवण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि० णि० अणंतगु०। एवं उज्जो०। अप्पसत्थ०४-उप० ओघं। एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३।

भागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

८५. चार गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, चार आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार और स्थिर आदि छह युगलका भङ्ग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह उसी प्रकार जानना चाहिए जिस प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे कहा है।

८६. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्गके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, द्वीन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।

८७. आतपके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार उद्योतकी

णवरि [तिरिक्ख०-] तिरिक्खाणु० परियत्तमाणियासु कादव्वं ।

८८. पंचिंदि०तिरिक्ख०अपज्ज० पंचण्णं कम्माणं णिरयभंगो । णिद्दाणिद्दाए ज० बं० अट्ठदं० णि० । तं तु० । एवमण्णमण्णस्स । तं तु० ।

८९. मिच्छ० ज० बं० सोलसक०-पंचणोक० णिय० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० । सेसं णिरयभंगो ।

९०. तिरिक्ख० ज० बं० पंचजादि-छस्संठाण-छस्संघ०--दोविहा०-तस०-थावरादिदसयुग० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थवण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । तिरिक्खाणु० णिय० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु० ।

मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान जानना चाहिए । इसी प्रकार अर्थात् सामान्य तिर्यञ्चके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी परिगणना परिवर्तमान प्रकृतियोंमें करनी चाहिए ।

८८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पाँच कर्मोंका भङ्ग नारकियोंके समान है । निद्रानिद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव आठ दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए जो उसी प्रकार होता है जैसा निद्रानिद्राकी मुख्यतासे कहा है ।

८९. मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है ।

९०. तिर्यञ्चगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस और स्थावर आदि दस युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बंध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

९१. मणुस० ज० बं० पंचिंदि०-मणुसाणु०-तस-बादर-पत्ते० णिय० । तं तु० । सेसं तिरिक्खगदिभंगो । एवं मणुसाणु० ।

९२. एइंदि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभ०-अणादे० णियमा० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । बादर-सुहुम-पज्जत्त०-अपज्ज०-पत्ते०-साधारण-थिरादिदुगाणं सिया० । तं तु० । एवं थावर० ।

९३. बेइंदि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-असंप०-तिरिक्खाणु०-तस-बादर-पत्ते०-दूभ०-अणादे० णिय० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । पर०-उस्सा०-उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । अप्पस०-पज्जत्तापज्ज०-थिराथिर०-सुभासुभ०-दूभग०-दुस्सर०-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । एवं तीइंदि०-चदुरिंदि० ।

---

९१. मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, त्रस, बादर और प्रत्येकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान जानना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

९२. एकेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग और अनादेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

९३. द्वीन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्रस, बादर, प्रत्येक, दुर्भग और अनादेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। परघात, उच्छ्वास और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध

९४. पंचिंदि० ज० बं० तिरिक्ख०--मणुसग०--छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-पज्जत्तापज्ज०-थिरादिछ० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-पसत्थापसत्थवण्ण०४--अगु०--उप०--णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० ।

९५. ओरालि०आ[illegible]-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०४--थावरादि०४--अथिरादिपंच० णियं० अणंतगुणब्भ० । तेजा०-क०-पसत्थ०४--अगु०-णिमि० णि० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

९६. समचदु० ज० बं० तिरिक्ख०--मणुस०--छस्संघ०--दोआणु०--दोविहा०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । पंचिंदि०-तस०४ णियमा० । तं तु० । ओरालि०-

करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रियजातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

९४. पञ्चेन्द्रियजातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और स्थिर आदि छहका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।

९५. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, स्थावर आदि चार और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन तैजसशरीर आदि सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

९६. समचतुरस्रसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति और त्रसचतुष्कका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजस-

१. ता० आ० प्रत्योः-पंच० णिमि० णिय० इति पाठः।

तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं समचदुरभंगो-चदुसंठा०-पंचसंघ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० ।

९७. हुंड० ज० बं० तिरिक्ख०-मणुस०-पंचजादि-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-तस०-थावरादिदसयुगल० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं हुंड०भंगो अथिरादिपंच० । ओरालि०अंगो० तिरिक्खोघं ।

९८. असंपत्त० ज० बं० दोगदि-चदुजादि-छस्संठाण-दोआणु०-दोविहा०-पज्जत्तापज्जत्त०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । सेसं हुंड०भंगो । अप्पसत्थ०४-उप० णिरयभंगो० ।

९९. पर० ज० बं० एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर०-सुहुम०-पज्जत्त०-साधार-दूभग०-अणादे०-अजस०-

---

शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु-चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार समचतुरस्रसंस्थानके समान चार संस्थान, पाँच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

९७. हुण्डकसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, पाँच जाति, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और त्रस-स्थावर आदि दस युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार हुण्डसंस्थानके समान अस्थिर आदि पाँचकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। औदारिक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है।

९८. असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, चार जाति, छह संस्थान, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग हुण्ड संस्थानके समान है। अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपघातका भङ्ग नारकियोंके समान है।

९९. परघातके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति और

णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । उस्सा० णि० । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं उस्सासं० ।

१००. आदाव० ज० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-थावर०-बादर०-पज्जत्त०-पत्ते०-दूभग-अणादे०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० अणंतगु० । एवं उज्जो० ।

१०१. पसत्थवि० ज० बं० दोगदि०-चदुजादि०-छस्संठा० छस्संघ०-दोआणु[1]०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । तस०४ सिया० । तं तु० । एवं दुस्सर० । एवं चेव तस० । णवरि पज्जत्तापज्जत्त० सिया० । तं तु० ।

निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। उच्छ्वासका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ और अशुभका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार उच्छ्वासकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१००. आतपके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, अनादेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०१. प्रशस्त विहायोगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। त्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार त्रस प्रकृतिकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि यह पर्याप्त और अपर्याप्तका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है।

---

१. आ० प्रतौ छस्संठा० दोआणु० इति पाठः।

१०२. बादर० ज० बं० दोगदि-पंचजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-तस-थावर-पज्जत्तापज्जत्त-पत्ते०-साधार०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०अंगो०-परघा०-उस्सा०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं पज्जत्त-पत्ते० । णवरि पडिपक्खा ण बंधदि[1] ।

१०३. सुहुम० ज० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-थावर०-दूभग-अणादे०-अजस० णिय० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अजह० अणंतगुणब्भ० । पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय-साधार०-थिराथिर-सुभासुभ० सिया० । तं तु० । एवं साधार० ।

१०४. अपज्ज० ज० बं० दोगदि-पंचजादि-असंप०-दोआणु०-तस०-थावर-बादर-सुहुम-पत्तेय-साधार० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-

१०२. बादर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस, स्थावर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार पर्याप्त और प्रत्येककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका बन्ध नहीं करता।

१०३. सूक्ष्मके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ और अशुभका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार साधारणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०४. अपर्याप्तके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, पाँच जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, प्रत्येक और साधारणका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क,

१. आ० प्रतौ णं बंधदि इति पाठः।

अगु०-उप०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ०। हुंड०-अथिरादिपंच णिय०। तं तु०। ओरालि०अंगो० सिया० अणंतगुणब्भ०।

१०५. थिर० ज० बं० दोगदि-पंचजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-तस-थावर-बादर-सुहुम-पत्तेय-साधारण-सुभगादिपंचयुग० सिया०। तं तु०। ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ०। ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ०। पज्जत्त० णि०। तं तु०। एवं सुभ-जस०। णवरि जस० सुहुम-साधारणं वज्ज। एवं सव्वअपज्जत्ताणं सव्वविगलिंदि०-पुढ०-आउ०-वणप्फदिपत्तेय-वणप्फदि-णियोदाणं च। तेउ-वाऊणं पि तं चेव। णवरि तिरिक्खे०-तिरिक्खाणु०-णीचा० धुवं कादव्वं। मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० वज्ज। णवरि अप्पसत्थ०४-उप० णिय०। तं तु०। सव्वएइंदियाणं पि तं चेव। णवरि तिरिक्खगदि०३ तेउ०भंगो। अप्पसत्थवण्ण० ज० बं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०

अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। हुण्ड संस्थान और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्गका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।

१०५. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, प्रत्येक, साधारण और शुभ आदि पाँच युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिक शरीर, तैजस-शरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पर्याप्तका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका सूक्ष्म और साधारणको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसी प्रकार अर्थात् तिर्यञ्च अपर्याप्तकों के समान सब अपर्याप्तक, सब विकलेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, जलकायिक, वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंके जानना चाहिए। तेजस्कायिक और वायु-कायिक जीवोंके भी यही सन्निकर्ष है। इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रको ध्रुव करना चाहिए। तथा मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रको छोड़-कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। इतनी और विशेषता है कि अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनु-भागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सब एकेन्द्रियोंके भी यही सन्निकर्ष है। इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यञ्चगति-त्रिकका भङ्ग अग्निकायिक जीवोंके समान है। तथा अप्रशस्त वर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध

१. ता० प्रतौ तिरिक्ख०३ इति पाठः।

सिया० । तं तु० । मणुस०-मणुसाणु०-उज्जोव० सिया० अणंतगुणब्भ० । पंचिंदियादि-धुवियाओ णिय० अणंतगुणब्भ० । अप्पसत्थगंध०३-उप० णिय० । तं तु० ।

१०६. मणुस०३ खवियाणं आहारदुगं तित्थय० ओघं । सेसं पंचिंदियतिरिक्ख-भंगो ।

१०७. देवेसु सत्तणं कम्माणं णिरयभंगो । तिरिक्ख० ज० बं० एइंदि०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थावर०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । तिरिक्खाणु० णि० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु० । मणुसगदि० तिरिक्खभंगो । णवरि एइंदियं आदाउज्जोवं थावरं च वज्ज । एवं मणुसाणु० ।

१०८. एइंदि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादे० णिय० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त०-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रियजाति आदि ध्रुव प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त गन्ध आदि तीन और उपघातका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

१०६. मनुष्यत्रिकमें क्षपक प्रकृतियां, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है।

१०७. देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। तिर्यञ्चगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, स्थावर और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगतिका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, आतप, उद्योत और स्थावरको छोड़कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वी की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०८. एकेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्ड-संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग और अनादेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु

णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । एवं थावर० ।

१०९. पंचिंदि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णिय० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि० । तं तु० । उज्जोव० सिया० । तं तु० । एवं ओरालि०अंगो०-तस० ।

११०. ओरालि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-अप्पसत्थवण्ण०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच णि० अणंतगुणब्भ० । एइंदि०-असंप०-अप्पसत्थ०-थावर०-दुस्सर० सिया० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० । तं तु० । तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-पर०-उस्सा०-बादर-पज्ज०-पत्ते०-णिमि० णि० । तं तु० । एवं

वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्तवर्ण चतुष्क, अप्रशस्तवर्ण चतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०९. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रस चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है जो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रस प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

११०. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, परघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-उज्जो०-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमिण त्ति । आदावं एवं चेव । णवरि एइंदि०-थावर० णिय० अणंतगुणब्भ० । चदुसंठा०-चदुसंघ०-दोविहा०-सुभग-दोसर०-अणादे० पढमपुढविभंगो ।

१११. हुंड० ज० बं० दोगदि-एइंदि०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थावर-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० अणंतगु० । एवं हुंडभंगो दूभग-अणादे० । अप्पसत्थ०४-उप० णिरयभंगो ।

११२. थिर० ज० बं० दोगदि-एइंदि०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थावर०-सुभादिपंचयुग० सिया० । तं तु० । पंचिं०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस०-तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-बादर०-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । एवं अथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० । तित्थ० णिरयभंगो ।

का भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। आतपकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रियजाति और स्थावरका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। चार संस्थान, चार संहनन, दो विहायोगति, सुभग, दो स्वर और अनादेयका भङ्ग पहली पृथिवीके समान है।

१११. हुण्डसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, एकेन्द्रिय जाति, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार हुण्ड संस्थानके समान दुर्भग, अनादेय की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातकी मुख्यतासे सन्निकर्ष नारकियोंके समान है।

११२. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, एकेन्द्रिय जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर और शुभादि पाँच युगलका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत, त्रस और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीर्थङ्कर

११३. भवण०-वाणवेंतर-जोदिसि०-सोधम्मीसाणं सत्तण्णं कम्माणं देवोघं। तिरिक्खग० ज० बं० दोजादि-छस्संठाण-छस्संघ०-दोविहा०-तस-थावर-थिरादि-छयुग० सिया०। तं तु०। ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० अणंतगु०। ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगु०। तिरिक्खाणु० णिय०। तं तु०। एवं तिरिक्खाणु०।

११४. मणुसग० ज० बं० तिरिक्खगदिभंगो। णवरि पंचिं०-मणुसाणु०-तस० णि०। तं तु०। एवं मणुसाणु०। एइंदि०-थावर० देवोघं।

११५. पंचिंदि० ज० बं० दोगदि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थिरादिछयुग० सिया०। तं तु०। ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्था-पसत्थ०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० अणंतगु०। उज्जो० सिया०

प्रकृतिका भङ्ग नारकियोंके समान है।

११३. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म ऐशान कल्पके देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। तिर्यञ्चगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, स्थावर और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

११४. मनुष्यगति के जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और त्रसका नियमसे बन्ध होता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यता सन्निकर्ष जानना चाहिए। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवों के समान है।

११५. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक

१. ता० आ० प्रत्योः थावरादि इति पाठः।

अणंतगुणब्भ० । तस० णि० । तं तु० । एवं पंचिंदिय०भंगो चदुसंठा०-चदुसंघ०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर०-आदे० ।

११६. हुंड० ज० बं० दोगदि-दोजादि-छस्संघ०-दोआणु०दोविहा०-तस-थावर-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । सेसं तिरिक्खगदिभंगो । एवं हुंड०भंगो दूभग-अणादे० । एवं चेव थिरादिछयुग-सुभासुभ-जस०-अजस० । णवरि तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० ।

११७. ओरालि० ज० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर-अथिरादिपंच० णि० अणंतगुणब्भ० । तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णिय० । तं तु० । आदाउज्जो० सिया० । तं तु० । एवं एदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

११८. ओरालि०अंगो० ज० बं० तिरिक्ख०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसंठा०-असंप०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-

---

होता है । उसका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान चार संस्थान, चार संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

११६. हुण्ड संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो जाति, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस, स्थावर और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है । इस प्रकार हुण्ड संस्थानके समान दुर्भग और अनादेय की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा इसी प्रकार स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

११७. औदारिक शरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय-जाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभाग का बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियों का परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए किन्तु वह उसी प्रकारका होता है ।

११८. औदारिक आङ्गोपाङ्गके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायो-

अथिरादिछ०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ० । उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० ।

११९. सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति पढमपुढविभंगो । आणद याव णवगेवज्जा त्ति सत्तण्णं कम्माणं देवोघं । मणुस० ज० बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०--पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-तस४-णिमि० णि० । तं तु० । हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-उप०अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ० णि० अणंतगुणब्भ० । एवं मणुसगदिभंगो पंचिंदियादि तं तु० पदिदाणं सव्वाणं ।

१२०. समचदु० ज० बं० मणुस०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि० अणंतगुणब्भ० । छस्संघ०-दोविहा०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । एवं पंचसंठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थिरादिछयुग० । णवरि तिण्णियुग०-तित्थय० सिया० अणंतगुणब्भ० । अप्पसत्थ०४-उप०-तित्थयरं च देवोघं ।

१२१. अणुदिस याव सव्वट्ठ त्ति सत्तण्णं कम्माणं आणदभंगो । णवरि थीणगिद्धि३-मिच्छ०-अणंताणु०४-इत्थि०-णवुंस०-णीचा० वज्ज । मणुस० ज० बं०

गति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।

११९. सानत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें प्रथम पृथिवीके समान भङ्ग है। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगतिके समान पञ्चेन्द्रिय जाति आदि 'तं तु' पतित सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१२०. समचतुरस्र संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार पाँच संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन युगल और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त-वर्ण चतुष्क, उपघात और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे जैसा कह आये हैं वैसा है।

१२१. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग आनत कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्यानगृद्धित्रिक, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद

आणदभंगो। णवरि अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर०-असुभ०-अजस० णिय० अणंत-गुणब्भ०। समचदु०-वज्जरि०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर०-आदे० णि०। तं तु०। तित्थ० सिया०। तं तु०। एवं तं तु० पदिदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०। अप्पसत्थ०४-उप० देवोघं।

१२२. थिर० ज० बं० सुभासुभ-जस०-अजस० सिया०। तं तु०। तित्थय० सिया० अणंतगुणब्भ०। एवं तिण्णियुग०।

१२३. पंचिंदि०-तस०२-पचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-ओरालियका०-कोधादि०४-चक्खु०-अचक्खु०-भवसि०-मिच्छादि०-मदि०-सुद०-विभंग०-असंजद०-सण्णि-असण्णि-आहारग त्ति ओघभंगो। णवरि किंचि विसेसो णादव्वो। ओरालिय-का० मणुसोघं। णवरि तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० तिरिक्खोघं[1]। कोधे कोधसंज० ज० बं० तिण्णं संज० णि० जहण्णा। माणे माणसंज० ज० बं०[2] दोसंज० णि० जहण्णा।

और नीचगोत्रको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करने वाले देवका भङ्ग आनत कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार 'तं तु' पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका यथासम्भव बन्ध करता है। जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपघात प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जैसा इनकी मुख्यतासे सामान्य देवोंके कह आये हैं उसी प्रकार यहां जानना चाहिए।

१२२. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्त-गुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तीन युगलोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२३. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, औदा-रिककाययोगी, क्रोधादि चार कषायवाले, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, भव्य, मिथ्यादृष्टि, मत्यज्ञानी, श्रुतज्ञानी, विभङ्गज्ञानी, असंयत, संज्ञी, असंज्ञी और आहारक जीवोंके ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि कुछ विशेषता जाननी चाहिए। औदारिककाययोगी जीवोंमें सामान्य मनुष्यों के समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि यहां तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जिस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे कहा है उस प्रकार जानना चाहिए। क्रोधकषायमें क्रोध संज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलनोंका

१. ता० प्रतौ तिरिक्ख० तिरिक्खोघं इति पाठः। २. ता० प्रतौ माणसंज० बं० इति पाठः।

मायाए मायसंज० ज० बं० लोभसंज० णि० जहण्णा। सेसाणं मोहविसेसो णादव्वो।

१२४. ओरालियमिस्से सत्तण्णं कम्माणं देवोघं। तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० ओघं। मणुस०-पंचजादि-छस्संठाण-छस्संघ०-मणुसाणु०-दोविहा०-तस-थावरादि०४-सुभग-दूभग-सुस्सर-दुस्सर-आदे०-अणादे० पंचिंदि०तिरि०अपज्ज०भंगो। देवग० ज० बं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदे०-अजस०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्भ०। वेउव्वि०-वेउव्वि० अंगो०-देवाणु० णि०। तं तु०। तित्थ० सिया०। तं तु०। एवं चदुपगदीओ०। ओरालिय-तेजइगादीओ ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० पंचिंदि०तिरि०-अपज्जत्तभंगो।

१२५. अप्पसत्थवण्ण० जं० बं० देवगदि-पसत्थपगदीणं णिय० अणंतगुणब्भ०। अप्पसत्थगंध०३-उप० णि०। तं तु०। तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ०। थिरादि-

---

नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध करता है। मानकषायमें मानसंज्वलनका जघन्य अनुभागबन्ध करनेवाला जीव दो संज्वलनोंका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध करता है। मायाकषायमें माया संज्वलनका जघन्य अनुभागबन्ध करनेवाला जीव लोभ संज्वलनका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध करता है। शेष प्रकृतियोंका मोहके समान विशेष जानना चाहिए।

१२४. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगति, पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस-स्थावर आदि चार युगल, सुभग, दुर्भग, सुस्वर, दुःस्वर, आदेय और अनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जिस प्रकार इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके कह आये हैं उस प्रकार जानना चाहिए। देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार वैक्रियिकशरीर आदि चार प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। औदारिकशरीर और तैजसशरीर आदि तथा औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योतका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

१२५. अप्रशस्त वर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त गन्ध आदि तीन और उपघातका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तिण्णियुग० पंचिंदि०तिरि०अपज्जत्तभंगो । णवरि तिरिक्ख०--देवगदि-वेउव्वि०-ओरालि०-वेउव्वि०अंगो०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० ।

१२६. वेउव्वियकायजोगीसु सत्तण्णं कम्माणं देवभंगो। तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० णिरयोघं। मणुस०--मणुसाणु० देवोघभंगो। एइंदि०--थावर० देवोघभंगो। णवरि तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० णिय० अणंतगुणब्भ० । पंचिंदि०--ओरालि०अंगो०--तस० णिरयोघं। ओरालि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच० णि० अणंतगुणब्भ० । एइंदि०--असंप०--अप्पसत्थ०--थावर--दुस्सर० सिया० अणंतगुणब्भ० । पंचिंदि०--ओरालि०अंगो०--आदाउज्जो०--तस० सिया० । तं तु० । तेजा-क०-पसत्थ०४--अगु०३--बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० । तं तु० । एवं तेजइगादीणं एक्कमेक्कस्स । तं तु० । सेसाणं देवोघं । एवं वेउव्वियमि० ।

१२७. आहार०-आहारमि० सत्तण्णं कम्माणं अणुदिसभंगो । णवरि अट्ठक०

होता है। स्थिर आदि तीन युगलोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यह तिर्यञ्चगति, देवगति, वैक्रियिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।

१२६. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। एकेन्द्रियजाति और स्थावरका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यह तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रसका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। औदारिक शरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो यह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार तैजसशरीर आदि प्रकृतियोंकी मुख्यतासे परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए।

१२७. आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग अनुदिशके

वज्ज । देवगदि० जं० बं० पंचिं०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थ०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० । तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर- असुभ-अजस० णिय० अणंतगुणब्भ० । तित्थ० सिया० । तं तु० । एवं देवगदिआदीओ तप्पाओग्गाओ तित्थयरं च एक्कमेक्कस्स । तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप० ओघं ।

१२८. थिर० ज० बं० देवगदिसंजुत्ताणं पसत्थापसत्थाणं पगदीणं णिय० अणंतगुणब्भ० । सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं अथिर-सुभ-असुभ-जस०-अजस० ।

१२९. कम्मइ० सत्तण्णं कम्माणं देवोघभंगो । तिरिक्ख०-मणुसग०-चदुजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थावरादि४-थिरादिछयुग० ओघं । देवगदि४ ओरालियमिस्स०भंगो । पंचिंदि० ज० बं० तिरि०-हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-

---

समान है । इतनी विशेषता है कि आठ कषायोंको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए । देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर,कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तत्प्रायोग्य देवगति आदि और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका यथासम्भव बन्ध करता है । जो जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुबन्ध भी करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका भङ्ग ओघके समान है ।

१२८. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति संयुक्त प्रशस्त और अप्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१२९. कार्मणकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार और स्थिर आदि छह युगलका भङ्ग ओघके समान है । देवगति चतुष्कका भङ्ग औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है । पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव

तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । ओरालियादि० णि० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं ओरालि०अंगो[1]-तस० ।

१३०. ओरालि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच० णिय० अणंतगुणब्भ० । एइंदि०-अप्पसत्थ०-थावर[2]-दुस्सर० सिया० अणंतगुणब्भ० । पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस०४ सिया० । तं तु० । तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-णिमि० णि० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

१३१. तित्थ० ज० बं० मणुसगदिपंच० सिया० अणंतगुणब्भ० । देवगदि०४ सिया० । तं तु० । पंचिंदियादि० णि० अणंतगुणब्भ० ।

तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक शरीर आदिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रस प्रकृतिकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१३०. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पांचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। एकेन्द्रियजाति, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रस चतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इन्हींमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

१३१. तीर्थङ्कर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति पञ्चकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। देवगतिचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।

---

१. आ० प्रतौ ओरालि०भंगो० इति पाठः। २. ता० प्रतौ अप्पसत्थ०अत्पसत्थ० (१) थावर इति पाठः।

१३२. इत्थिवे० सत्तण्णं कम्माणं ओघं। णवरि कोधसंज० ज० बं० तिण्णि-संज०-पुरिस० णिय० बं० णियमा जहण्णो। चदुगदि-चदुजादि-छस्संठाण--छस्संघ०-चदुआणु०-दोविहा०-थावरादि०४-थिरादिछयुग० पंचिंदि०तिरि०भंगो।

१३३. पंचिं० ज० बं० णिरयगदि-हुंड०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ० णि० अणंतगुणब्भ०। वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३--तस०४-णिमि० णि०। तं तु०। एवं [वेउव्वि०-] वेउव्वि०-अंगो०-तस[3]०। ओरालि०-आदाउज्जो० सोधम्मभंगो।

१३४. ओरालि०अंगो० ज० बं० तिरिक्ख०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-असंप०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर०-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ०। बेइंदि०-पंचिंदि०-पर०-उस्सा०-उज्जो०--अप्पसत्थ०-पज्जत्तापज्ज०-दुस्सर० सिया० अणंतगुणब्भ०।

१३५. तेजा०-कम्मइ० ओघं। णवरि [ओरालियअंगो०-] असंपत्तं वज्ज।

---

१३२. स्त्रीवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि क्रोध संज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे जघन्य होता है। चार गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, चार आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार और स्थिर आदि छह युगलका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है।

१३३. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग और त्रसकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। औदारिकशरीर, आतप और उद्योतका भंग सौधर्म-कल्पके समान है।

१३४. औदारिक आङ्गोपाङ्गके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, प्रशस्त-वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। द्वीन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।

१३५. तैजसशरीर और कार्मणशरीरका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिकआङ्गोपांग और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

---

१. ता० प्रतौ कोधसंज० पुरिस० णिय० बंध० णियमो० (मा०) जहण्णा इति पाठः। २ ता० आ० प्रत्योः –आदि चदुसंठाणं ओरालि० अंगो० छस्संघ० इति पाठः। ३. ता० आ० प्रत्योः तस० ४ इति पाठः।

पंचिंदि०-ओरालि०-वेउव्वि-०वेउव्वि०अंगो०-आदाउज्जो०-[तस०] सिया० । तं तु० । एइंदि०-थावर० सिया० अणंतगुणब्भ०[1] । कम्मइगादि० णिमि० णि० । तं तु० । एवं तेजइगादि० अण्णमण्णस्स । तं तु० । आहारदुग-अप्पसत्थ०४-उप०-तित्थय० ओघभंगो० ।

१३६. पुरिसेसु सत्तण्णं कम्माणं इत्थिभंगो । सेसं ओघं । णवरि तिरिक्खगदिदु० परियत्तमाणिगा कादव्वा ।

१३७. णवुंसगे सत्तण्णं कम्माणं इत्थिवेदभंगो । चदुगदि-चदुजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-चदुआणु०-दोविहा०-थावरादि०४-थिरादिछयुग० ओघभंगो । पंचिंदि० ज० बं० दोगदि-असंप०-दोआणु० सिया० अणंतगुणब्भ० । दोसरीर-दोअंगो०-उज्जो० सिया० । तं तु० । तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४ [-णिमि०] णि० । तं तु० ।

पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । एकेन्द्रियजाति और स्थावरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । कार्मणशरीर आदि और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तैजसशरीर आदिका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । आहारिकद्विक, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है ।

१३६. पुरुषवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भंग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है । शेष भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगतिद्विककी परिवर्तमान प्रकृतियोंमें परिगणना करनी चाहिए ।

१३७. नपुंसकवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है । चार गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, चार आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार और स्थिर आदि छह युगलका भङ्ग ओघके समान है । पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रस चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है ।

---

१. ता० आ० प्रत्योः सिया० तं तु० अणंतगुणब्भ० इति पाठः ।

[हुंड०-] अप्पसत्थवण्ण०४-उप० [-अप्पसत्थ०-] अथिरादिछ० णि० अणंत-गुणब्भ० । एवं तेजइगादि० । एवं ओरालिगादीणं पि सिया० । तं तु० । ओरालि० ओरालि०अंगो० सिया० । सेसं मणुसभंगो । [णवरि आदवं तिरिक्खोघं] ।

१३८. अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचंतरा० णि० बं० णि० जहण्णा । चदुसंज० ओघं ।

१३९. आभि०-सुद०-ओधि० सत्तण्णं कम्माणं ओघं । मणुसग० ज० बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ०४-मणु-साणु०-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० । तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर-असुभ-अजस० णिय० अणंतगुणब्भ० । एवं मणुसगदि-चदुक० ।

१४०. देवगदि ज० बं० मणुसभंगो । णवरि तित्थ० सिया० । तं तु० । एवं देवगदिचदुकस्स वि ।

हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार नियमसे तं तु पतित तैजस-शरीर आदिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा इसी प्रकार सिया तं तु पतित औदारिक-शरीर आदिकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इन्हींमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभाग का बन्ध करनेवाला जीव शेषका कदाचित् बन्ध करता है। जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि औदारिकशरीरके जघन्य अनुभाग-का बन्ध करनेवाला जीव औदारिकआङ्गोपाङ्गका कदाचित् बन्ध करता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। किन्तु आतपका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है ।

१३८. अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे जघन्य होता है। तात्पर्य यह है कि इन चौदह प्रकृतियोंमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध करता है । चार संज्वलनका भङ्ग ओघके समान है ।

१३९. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार मनुष्य-गत्यानुपूर्वी आदि चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१४०. देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग मनुष्यके समान है । इतनी विशेषता है कि तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अज-घन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार देवगत्यानु-

१४१. पंचिंदि० ज० बं० दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-तित्थ० सिया० । तं तु० । तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थवण्ण०४-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० । तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर-असुभ-अजस० णि० अणंतगुणब्भ० । एवं पंचिंदिय०भंगो तेजइगादीणं पसत्थाणं[1] ।

१४२. तित्थ० ज० बं० देवगदि० णि० । तं तु० । आहारदुगं[2]-अप्पसत्थ०४-उप० ओघं ।

१४३. थिर० ज० बं० दोगदि-दोसरीर० सिया० अणंतगुणब्भ० । पंचिंदियादि० णि० अणंतगुब्भ० । दोयुग० सिया० । तं तु० । तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं तिण्णियुग० । एवं ओधिदं०-सम्मादि०-खइगस० । णवरि खइगे मणुसगदिपंचग० जह० तित्थ० सिया० । तं तु० ।

मार्गणाओंके चतुष्कोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१४१. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियजातिके समान तैजसशरीर आदि प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१४२. तीर्थङ्कर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगतिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। आहारकद्विक, अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका भंग ओघके समान है।

१४३. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति और दो शरीरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। दो युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तीन युगलोंका भङ्ग है। इसी प्रकार अर्थात् आभिनिबोधिकज्ञानी आदि जीवोंके समान अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि और क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें मनुष्यगति पञ्चकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और

१. ता० प्रतौ तेजइगादीणं पसं (स) त्थाणं। तित्थ०, आ० प्रतौ तेजइगादीणं तित्थ० इति पाठः।
२. ता० प्रतौ णि०। तित्थ आहारदुगं० (गं), आ० प्रतौ णि० तं तु० आहारदुगं इति पाठः।

१४४. मणपज्जवे सत्तण्णं कम्माणं ओधिभंगो० । णवरि अट्ठकसायं वज्ज । णाम० ओधिभंगो । णवरि मणुसगदिपंचगं वज्ज । तित्थ० ओघं । एवं संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद० । सुहुमसंप० अवगदवेदभंगो ।

१४५. किण्णाए सत्तण्णं कम्माणं णिरयभंगो । सेसं णवुंसगभंगो । णील-काऊणं सत्तण्णं कम्माणं णिरयभंगो । णिरयगदि० ज० ओघं० । पंचिंदि० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड० णि० अणंतगु० । ओरालि० णि० । तं तु० [सेसं] णिरयदंडओ भाणिदव्वओ[1] । वेउव्वि० जं० बं० णिरयगदिअट्ठावीसं अणंतगुणब्भ० । वेउव्वि०-अंगो० णि० । तं तु० । एवं वेउव्विय०अंगो० । सेसं किण्णभंगो० । काऊ० तित्थ० णिरयभंगो ।

१४६. तेऊए सत्तण्णं कम्माणं देवगदिभंगो । णवरि कोधसंज० ज० बं० तिण्णि-संज०-पंचणोक० णि० । तं तु० । दोगदि-दोजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-

अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है ।

१४४. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि आठ कषायोंको छोड़कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए । नामकर्मका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिपञ्चकको छोड़कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए । तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार संयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार-विशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए । सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंमें अपगतवेदी जीवोंके समान भङ्ग है ।

१४५. कृष्ण लेश्यामें सात कर्मोंका भंग नारकियोंके समान है । शेष भङ्ग नपुंसकोंके समान है । नील और कापोत लेश्यामें सात कर्मोंका भङ्ग नारकियोंके समान है । नरकगतिके जघन्य अनुभागके बन्धक जीवोंका भङ्ग ओघके समान है । पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति और हुण्डसंस्थानका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिकशरीरका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । शेष प्रकृतियोंका भंग नरकदण्डकके समान कहना चाहिए । वैक्रियिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति आदि अट्ठाईस प्रकृतियोंका बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका भी भङ्ग जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग कृष्णलेश्याके समान है । कापोतलेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग नारकियोंके समान है ।

१४६. पीत लेश्यामें सात कर्मोंका भंग देवगतिके समान है । इतनी विशेषता है कि क्रोध संज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलन और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । दो गति, दो जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति,

१. आ० प्रतौ भाणिदव्वाओ इति पाठः ।

[दोविहा०.] तस-थावर-तिण्णियुग० सोधम्मभंगो। देवगदि० ज० बं० पंचिंदियादि णि० अणंतगुणब्भ०। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि०। तं तु०। एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु०। ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-[आदाउज्जो-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-] णिमि०-[तित्थ०] सोधम्मभंगो[1]। थिरादितिण्णियुगलाणं [ज० बं०] दोगदि० सिया०। तं तु०। देवगदि०४ सिया० अणंतगुणब्भ०। सेसं सोधम्मभंगो। [आहारदु०-अप्पसत्थवण्ण४-उप० मणुसभंगो।] एवं पम्माए वि। णवरि पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-तस० सव्वाणं संकिलेस्सपगदीणं सहस्सार-भंगो। तित्थय० देवभंगो।

१४७. सुक्काए सत्तण्णं क० ओघं। देवगदि०४-आहारदुगं पम्माए भंगो। सेसाणमाणदभंगो। अप्पसत्थ०४-उप० ओघं। अब्भव० मदि०भंगो। णवरि अप्पसत्थ-[illegible] ज० बं० [illegible] सिया०। तं तु०। दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-

---

त्रस, स्थावर और तीन युगलका भंग सौधर्म कल्पके समान है। देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका भङ्ग जानना चाहिए। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, आतप, उद्योत, बादर, पर्याप्त प्रत्येक, निर्माण और तीर्थङ्करका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। स्थिर आदि तीन युगलके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। देवगति चतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसका शेष भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। आहारकद्विक, अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका भङ्ग मनुष्योंके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्यामें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, त्रस और सर्व संक्लिष्ट परिणामोंसे बँधनेवाली सब प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रार कल्पके समान है। तथा तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग देवोंके समान है।

१४७. शुक्ललेश्यामें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। देवगति चार और आहारक द्विकका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आनतकल्पके समान है। अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपघातका भङ्ग ओघके समान है। अभव्योंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अप्रशस्त वर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। दो गति, दो शरीर, दो

---

१. ता० आ० प्रत्योः णिमि० णि० तं तु० सोधम्मभंगो इति पाठः। २. ता० आ० प्रत्योः ओघं। णामगदि देवगदि० इति पाठः।

वज्जरि०-दोआणु०- ज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थव०४-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । अप्पसत्थगंध३-उप० णि० । तं तु० ।

१४८. वेदग०-उवसम० आधिदंसणिभंगो। अप्पसत्थ०४-उप० ओघं। सासा० मदि०भंगो । मिच्छत्तं[1] वज्ज । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० ओघं । दोगदि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआणु०-दोविहा०-थिरादिछयुग० ओघं। णवरि पज्जत्तसंजुत्तं कादव्वं। पंचिंदि० ज० बं० तिरिक्खगदिआदि[2] णि० अणंतगुणब्भ० । ओरालिगादिसव्वसंकिलिट्ठाणं णि० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं मणुस०-मणुसाणु० । तं तु० । चेउव्विय० ज० बं० पंचिंदियादि० णि० अणंतगुणब्भ० । तिण्णियुगल० सिया० । तं तु० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अंगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त गन्ध आदि तीन और उपघातका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

१४८. वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें अवधिदर्शनी जीवोंके समान भङ्ग है। मात्र अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका भङ्ग ओघके समान है। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका भंग ओघके समान है। दो गति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्त प्रकृतिको संयुक्त करके कहना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक आदि सर्व संक्लिष्ट परिणामोंसे बन्धको प्राप्त होनेवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भंग है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। वैक्रियिक शरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

---

१. ता० आ० प्रत्योः ओघं अब्भव० मदिभंगो । मिच्छत्तं इति पाठः । २. ता० प्रतौ जादि० इति पाठः ।

किंचि० विसेसो जाणिदव्वो। एवं वेउव्वि०अंगो०। [सम्मामि० वेदग०भंगो। विसेसो जाणिदव्वो।] मिच्छादिट्ठी० मदि०भंगो। अणाहार० कम्मइगभंगो।

एवं जहण्णसण्णियासो समत्तो।

एवं सत्थाणसण्णियासो समत्तो।

१४९. परत्थाणसण्णियासे दुवि०—जह० उक्क०। उक्कस्सए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० आभि० उक्क० अणुभागं[1] बंधंतो चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-हुंड०-अप्पसत्थ०४—उप०-अथिरादिपंच-णीचा०-पंचंत० णिय० बंध०। तं तु० छट्ठाणपदिदं बंधदि। अणंतभागहीणं वा०५। णिरय०-तिरिक्ख०-एइंदि०-असंप०-दोआणु०-अप्पसत्थ०-थावर-दुस्सर० सिया०। तं तु०। पंचिंदि०-दोसरीर-दोअंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगुणहीणं०। तेजा०-क०-पसत्थ०४—अगु०-पर०-उस्सा०--बादर-पज्जत्त--पत्ते०-णिमि० णि० अणंतगुणहीणं०। एवं आभिणि०भंगो। चदुणा०-णवदंसणा०-असादा० - मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-हुंड०-अप्पसत्थ०४—उप०-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचंतरा०।

जो कुछ विशेषता है वह जान लेनी चाहिए। इसी प्रकार वैक्रियिक आंगोपांग की मुख्यतासे सन्निकर्ष है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके समान भङ्ग है। किन्तु कुछ विशेषता जाननी चाहिए। मिथ्यादृष्टि जीवोंका भंग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। अनाहारक जीवोंका भंग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है। इस प्रकार जघन्य सन्निकर्ष समाप्त हुआ।

इस प्रकार स्वस्थान सन्निकर्ष समाप्त हुआ।

१४९. परस्थान सन्निकर्षकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघकी अपेक्षा आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानि रूप बाँधता है। अर्थात् या अनन्तभागहीन बाँधता है, या असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन या अनन्तगुणहीन बाँधता है। नरकगति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, परघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार आभिनिबोधिकज्ञानावरणके समान चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, हुण्ड

१. ता० प्रतौ अणंतभागं इति पाठः।

१५०. सादावेदणीयं उक्क० अणुभागं बंधंतो पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० णि० अणंतगुणहीणं बं० । जसगि०-उच्चा० णि० उक्कस्स० । एवं जस०-उच्चा० ।

१५१. इत्थिवे० उक्क० बं० पंचणा०-णवदंस०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दु०-तिरिक्ख०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० अणंतगुणही० । तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ०-उज्जो० सिया० अणंतगुणही० । एवं पुरिस० । णवरि दोगदि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआणु०-उज्जो० सिया० अणंत०हीणं० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

१५२. हस्स० उक्क० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-अथिरादिपंच०-णिमि०णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगु०हीणं० । इत्थि०-णवुंस०-दोगदि-पंचजादि-पंचसंठा०-ओरालि० अंगो०-पंचसंघ-दोआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-बादर-सुहुम-पज्जत्तापज्ज०-पत्ते०-साधार०-दुस्सर० सिया० अणंतगु०ही० । रदि० णि० ।

संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका भङ्ग जानना चाहिए ।

१५०. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है। यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१५१. स्त्रीवेदके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आंगोपांग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है। तीन संस्थान, तीन संहनन और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दो गति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है।

१५२. हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, दो गति, पाँच जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आंगोपांग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है। रतिका नियमसे बन्ध करता है जो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो

तं तु० । एवं रदीए० ।

सर्वाधिकार :—आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

१५३. णिरयायु० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णिरयगदिअट्ठावीस०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंत०हीणं० ।

१५४. तिरिक्खायु० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०--सोलसक०-भय-दु०-तिरिक्ख०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०--अगु०४--पसत्थवि०-तस४-सुभग--सुस्सर--आदे०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंत०हीं० । सादासाद०-इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० अणंतगुणही० । एवं मणुसायु[1]० । णवरि उच्चा० णि० अणंतगु० ।

१५५. देवायु० उ० बं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दु०-देवगदिसत्तट्ठावीसं--उच्चा०--पंचंत० णि० अणंतगुणहीणं० । आहारदु०-तित्थय० सिया० अणंतगुणहीणं० ।

१५६. णिरयगदि उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-

वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१५३. नरकायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नरकगति आदि अट्ठाईस प्रकृतियाँ, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है।

१५४. तिर्यञ्चायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आंगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है।

१५५. देवायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि सत्ताईस या अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। आहारकद्विक और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है।

१५६. नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-

१. ता० आ० प्रत्योः मणुसायु० इति पाठः ।

पंचणोक०-णीचा०-पंचंत० णि० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । णामपसत्थाणं णिय० अणंतगुणहीणं । णामअप्पसत्थाणं णाणावरणभंगो । एवं णिरयाणु० । एवं तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० । णाम० सत्थाणभंगो ।

१५७. मणुस०-मणुसाणु० उ० बं० पंचणा०-छदंसणा०-सादावे०-बारसक०-पंचणोक०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणहीणं० । णाम० सत्थाणभंगो० । एवं मणुसगदिपंचगस्स ।

१५८. देवगदि० उ० बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पंचणोक०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणहीणं० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं देवगदिसंजुत्ताणं पसत्थाणं णामाणं ।

१५९. बेइं०-तेइंदि०-चदुरिं० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंत०हीं० । णाम० सत्थाणभंगो । णग्गोद० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-चदुणोक०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंत०हीं० । इत्थि०-णवुंस० सिया० अणंत०हीं० । णाम०

वरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। नामकर्मकी प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मकी अप्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु यहां नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

१५७. मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मकी प्रकृतियों का भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार मनुष्यगतिपञ्चककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१५८. देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार देवगतिसंयुक्त प्रशस्त नामकर्मकी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१५९. द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। न्यग्रोधसंस्थानके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, चार नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट

---

१. आ० प्रतौ० णि० पंचंत० इति पाठः ।

मुनिदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सत्थाणभंगो। एवं सादि०। एवं खुज्ज०-वामण०। णवरि णवुंस० णियमा अणंत०ही०। चदुसंघ० चदुसंठाणभंगो। असंप० णाणावरणभंगो हेट्ठा उवरि। णाम० सत्थाणभंगो। एवं एइंदि०-थावर०।

१६०. आदाव० उ० बं०[1] पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणही०। सादासाद०-चदुणोक० सिया० अणंत०-ही०। णाम० सत्थाणभंगो।

१६१. उज्जो० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णिय० अणंत०ही०। णाम० सत्थाणभंगो।

१६२. अप्पसत्थवि०-दुस्सर० उ० बं० हेट्ठा उवरि णिरयगदिभंगो। णाम० सत्थाणभंगो।

१६३. सुहुम०-अपज्जत्त-साधार० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-

अनन्तगुणा हीन होता है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार स्वाति-संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार कुब्जक और वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह नपुंसकवेदका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। चार संहननका भंग चार संस्थानके समान है। असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका भंग नामकर्मसे पहलेकी और आगेकी प्रकृतियोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणके समान है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार अर्थात् असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके समान एकेन्द्रिय जाति और स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६०. आतप प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

१६१. उद्योतके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

१६२. अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और आगेकी प्रकृतियोंका भङ्ग नरकगतिके समान है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

१६३. सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला, जीव पाँच

---

१. आ० प्रतौ एइंदि० आदाव थावर उ० बं० इति पाठः। २. ता० प्रतौ पंचणा० असादा० इति पाठः।

मिच्छ०--सोलसक०--पंचणोक०--णीचा०--पंचंत० णिय० अणंत०ही० । णाम० सत्थाणभंगो ।

१६४. णिरएसु आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तिरिक्ख०--हुंड०-असंप०--अप्पसत्थ०४--तिरिक्खाणु०-उपघा०-अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ०-णीचा०-पंचंत० णि० । तं तु० । पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थ०४--अगु०३--तस०४--णिमि० णि० अणंत०ही० । उज्जो० सिया० अणंत०ही० । एवं णाणावरणादि० तं तु० पदिदाओ ताओ अण्णमण्णस्स । तं तु० ।

१६५. सादा० उ० बं० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४--उप०-पंचंत० णि० अणंत०ही० । मणुस०-पंचिंदि०-तिण्णिसरीर-समचदु०--ओरालि०-अंगो० - वज्जरि० - पसत्थ०४--मणुसाणु० - अगु०३--पसत्थवि० - तस०४--थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा० णि० । तं तु० । तित्थ० सिया० । तं तु० । एवं सादभंगो तं तु० पदिदाणं० ।

ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पांच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

१६४. नारकियोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आंगोपांग, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार तं तु पतित ज्ञानावरणादि जितनी प्रकृतियां हैं उनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु आभिनिबोधिक ज्ञानावरण को मुख्य करके जिस प्रकार सन्निकर्ष कहा है उसी प्रकार तं तु पतित शेष सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे कहना चाहिए।

१६५. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपघात और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, तीन शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आंगोपांग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि

१६६. सेसं ओघं। णवरि तिरिक्खायु० उ० बं० मिच्छ० णि० अणंतगु०हीं०। एवं धुवियाणं०। सादासाद० सिया० अणंत०हीं०। एवं परियत्तमाणियाओ सव्वाओ सादभंगो। मणुसाउ० उ० बं० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-पुरिस०-भय-दु०-मणुस०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो[1]०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंत०हीं०। सादासाद०-चदुणोक०-थिरादितिण्णियुग०-तित्थ० सिया[2] अणंत०-हीं०। चदुसंठा०-चदुसंघ०-उज्जो० ओघं०। एवं छसु पुढवीसु। णवरि उज्जो० तिरिक्खायुभंगो। सत्तमाए पुरिस०-हस्स-रदि-[चदु-] संठा०-पंचसंघ० उ० बं० तिरिक्खगदी धुवं कादव्वं। सेसं णिरयोघं।

१६७. तिरिक्खेसु आभिणिबोधि० उ० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णिरयग०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०-णीचा०-पंचंत० णि०। तं तु०। पंचिंदि०-तिण्णिसरीर-वेउव्वि०-

अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनका सातावेदनीयके समान भंग जानना चाहिए।

१६६. शेष प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्वका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियों का जानना चाहिए। सातावेदनीय और असातावेदनीयका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। परिवर्तमान जितनी प्रकृतियाँ हैं उनका इसी प्रकार सातावेदनीयके समान भंग है। मनुष्यायुके उत्कृष्ट अनुभाग का बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आंगोपांग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर आदि तीन युगल और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। चार संस्थान, चार संहनन और उद्योतका भंग ओघके समान है। इसी प्रकार प्रारम्भकी छह पृथिवियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उद्योतका भंग तिर्यञ्चायुके समान है। सातवीं पृथिवीमें पुरुषवेद, हास्य, रति, चार संस्थान और पाँच संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगतिका ध्रुव बन्ध करता है अर्थात् नियमसे बन्ध करता है। शेष सब प्ररूपणा सामान्य नारकियोंके समान है।

१६७. तिर्यञ्चोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पांच नोकषाय, नरकगति, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनु-

१. आ० प्रतौ तेजाक० ओरालि० अंगो० इति पाठः। २. ता० प्रतौ तिण्णियुग० सिया० इति पाठः।

अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस४-णिमि० णि० अणंत०हीं० । एत्थ एदाओ तं तु पदिदाओ अण्णमण्णस्स आभिणि०भंगो ।

१६८. साद० उ० बं० पंचणा०-छदंसणा०-अट्ठक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि० अणंतगुणहीं० । देवगदिसत्तावीस-उच्चा० णि० । तं तु० । एदाओ सादभंगो । चदुणोक०-चदुआयु० ओघं ।

१६९. तिरिक्खग० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णीचा०-पंचंत णि० अणंत०हीं० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं चदुजादि-असंप०-तिरिक्खाणु०-थावरादि४० ।

१७०. मणुसग० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-दु०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगु०हीं० । सादासाद०-चदुणोक० सिया० अणंत०-हीं० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं मणुसगदिपंच० । चदुसंठा०-चदुसंघ०-आदाव० ओघं[1] । उज्जो० पढमपुढविभंगो । अथवा बादर-तेउ०-वाउ० उक्कस्सयं करेंदि । सव्व-

भागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, तीन शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । यहां ये तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनका परस्पर आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके समान भङ्ग है ।

१६८. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । देवगति आदि सत्ताईस प्रकृतियाँ और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । यहां देवगति आदि प्रकृतियोंका भंग सातावेदनीयके समान है । चार नोकषाय और चार आयुका भंग ओघके समान है ।

१६९. तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है । इसी प्रकार चार जाति, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और स्थावर आदि चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१७०. मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है । इसी प्रकार मनुष्यगति पञ्चककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । चार संस्थान, चार संहनन और आतपका भंग ओघके समान है । उद्योतका भंग पहली पृथिवीके समान है । अथवा बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक जीव उत्कृष्ट करते हैं ।

१. ता० प्रतौ आदाउ० ओघं, आ० प्रतौ आदाउज्जो० ओघं इति पाठः ।

विसुद्धा मूलोघो। एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३।

१७१. पंचिं०तिरि०अपज्जत्तगेसु आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तिरिक्ख०-एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावरादि४-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचंत० णि०। तं तु०। ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-णिमि० णि० अणंत०हीं०। एवमेदाओ अण्णोण्णस्स तं तु०।

१७२. सादा० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि० अणंतगुणहीं०। मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-[illegible] एवमेदाओ एकमेकस्स। तं तु०।

१७३. इत्थि० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अप्पसत्थ०-

---

यदि सर्व विशुद्ध तिर्यञ्च करते हैं तो मूलोघके समान भंग है। इसी प्रकार अर्थात् सामान्य तिर्यञ्चोंके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके जानना चाहिए।

१७१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि पाँच, नीच गोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। यहां तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनकी अपेक्षा परस्पर इसी प्रकार सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१७२. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पांच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। यहां तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनकी अपेक्षा परस्पर जैसा सातावेदनीयकी अपेक्षा सन्निकर्ष कहा है उसी प्रकार सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१७३. स्त्रीवेदके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति,

तस०४-दूभग-दुस्सर-अणादे०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० अणंतगुणहीणं० । सादासाद०-चदुणोक०-दोगदि-तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-थिरादि-तिण्णियुग० सिया० अणंतगुणहीणं० । एवं पुरिस० । णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ० ।

१७४. हस्स० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दु[1]०-तिरिक्ख०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावरादि०४-थिरादिपंच०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणहीणं० । रदी णि० । तं तु० । एवं रदीए० । दोआउ[2]० णिरयभंगो ।

१७५. बेइं०-तेइं०-चदुरिं० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणही० । सादासाद०-चदुणोक० सिया० अणंतगुणहीणं० । णाम० सत्थाणभंगो ।

१७६. चदुसंठा० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ[3]०-सोलसक०-भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणहीणं० । दोवेद०-चदुणोक० सिया० अणंत-

---

त्रसचतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय, दो गति, तीन संस्थान, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहां तीन संस्थान और तीन संहननके स्थानमें पांच संस्थान और पाँच संहनन कहने चाहिए।

१७४. हास्य प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर आदि चार, स्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। रतिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार रति की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। दो आयुओंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष नारकियोंके समान है।

१७५. द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रियजातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

१७६. चार संस्थानके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। दो वेद और

---

१. आ० प्रतौ सोलसक० भयदु० इति पाठः। २. आ० प्रतौ दोआणु० इति पाठः।
३. ता० प्रतौ णवदंसणा० मिच्छ० इति पाठः।

गुणहीणं० । णाम० सत्थाणभंगो । णवरि णग्गोद०-सादि० उक्कस्सं बंधंतो दोवेद० सिया० अणंतगुणहीणं० । खुज्ज०-वामण० णवुंस० णि० अणंतगुणहीणं० । एवं चदु-संघ० । असंपत्त० बेइंदियभंगो[1] ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

१७७. अप्पसत्थ०-दुस्सर० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दु०[2]-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणहीणं० । सादासाद०-चदुणोक० सिया० अणंतगुणहीणं० । णाम० सत्थाणभंगो । आदाउज्जो० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । एवं सव्वअपज्जत्त-सव्वविगलिंदियाणं पुढ०-आउ०-वणप्फदिपत्तेय-णियोदाणं च । तेउ०-वाऊणं पि तं चेव । णवरि मणुसायु०-मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० वज्ज० ।

१७८. मणुसेसु खविगाणं ओघं । सेसं पंचिंदियतिरिक्खभंगो । एवं मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु ।

१७९. देवेसु आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०--तिरिक्ख०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०--उप०-अथिरादि-

---

चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इतनी विशेषता है कि न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थान और स्वाति संस्थानके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो वेदका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। तथा कुब्जक संस्थान और वामन संस्थानके उत्कृष्ट अनुभाग का बन्ध करनेवाला जीव नपुंसकवेदका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार चार संहननोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। असम्प्राप्तासृपाटिकासंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष द्वीन्द्रियजातिके समान है।

१७७. अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। आतप और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इसी प्रकार अर्थात् पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान सब अपर्याप्तक, सब विकलेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, जलकायिक, वनस्पति प्रत्येक और निगोद जीवोंके जानना चाहिए। अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंके भी यही सन्निकर्ष है। इतनी विशेषता है कि इनके मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१७८. मनुष्योंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। शेष भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंके जानना चाहिए।

१७९. देवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र

---

१. आ० प्रतौ चदुसंघ० अप्पसत्थ० बेइंदियभंगो इति पाठः। २. आ० प्रतौ सोलसक० भयदु० इति पाठः।

पंच-णीचा०-पंचंत० णि० । तं तु० । एइंदि०-असंप०-अप्पसत्थवि०-थावर०-दुस्सर० सिया० । तं तु० । पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगुणहीणं० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० । अणंतगुणहीणं । एवं तं तु० पदिदाणं । सादद्दंडओ इत्थि०-पुरिस० णिरयोघभंगो ।

१८०. हस्स० उ० ओघं । णवरि दोगदि-दोजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-पंचसंघ०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्पत्थवि०-तस०-थावर०-दुस्सर०सिया० अणंतगुणहीणं० । इत्थि०-णवुंस० सिया० अणंतगुणहीणं० । रदि० णि० । तं तु० । एवं रदीए० । एइंदि०-थावर० ओघं । चदुसंठा०-चदुसंघ० ओघं ।

१८१. असंप० उ० बं० हेट्ठा उवरि तिरिक्खभंगो । णाम० सत्थाणभंगो । सेसं णिरयभंगो ।

१८२. भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोधम्मी० आभिणिबोधि० उ० बं० चदुणा०-

और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । एकेन्द्रियजाति, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभाग का भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार तं तु पतित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । सातावेदनीय दण्डक, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य नारकियोंके समान है ।

१८०. हास्य प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि दो गति, दो जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । रतिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । एकेन्द्रियजाति और स्थावरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है । चार संस्थान और चार संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है ।

१८१. असम्प्राप्तासृपाटिकासंहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चोंके समान है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है । शेष भङ्ग नारकियोंके समान है ।

१८२. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म और ऐशान कल्पके देवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण,

णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तिरिक्ख०-एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर०-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचंत०। तं तु०। ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंत०-हीणं०। आदाउज्जो० सिया० अणंत०हीणं०। एवमेदाओ तं तु० पदिदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०।

१८३. असंप० उ० बं० हेट्ठा उवरिं तिरिक्खगदिभंगो। णवरि णि० अणंतगुणहीणं०। णाम० सत्थाणभंगो। णवरि अप्पसत्थ०-दुस्सर० णिय०। तं तु०। सेसं देवोघं।

१८४. सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति पढमपुढविभंगो। आणद याव णवगेवज्जा त्ति आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-उप०अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ०-णीचा०-पंचंत० णि०। तं तु०। मणुस०-पंचिंदि०-तिण्णिसरीर-ओरालिअंगो०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-णिमि० णि० अणंतगुणही०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स तं तु०।

असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार यहां जितनी तं तु पतित प्रकृतियां हैं उनकी मुख्यतासे परस्पर उसी प्रकार सन्निकर्ष जानना चाहिए जिस प्रकार आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी मुख्यतासे कहा है।

१८३. असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और आगेकी प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन बन्ध करता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है किन्तु इतनी विशेषता है कि अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है।

१८४. सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, तीन शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो

सेसं सहस्सारभंगो। णवरि मणुसगदि [२] धुवं कादव्वं।

१८५. अणुदिस याव सव्वट्ठ त्ति आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर-असुभ-अजस०-पंचंत णि०। तं तु० मणुस०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-सुभग०-सुस्सर०-आदे०-णिमि०-उच्चा० णि० अणंतगुणही०। तित्थ० सिया० अणंतगुणही०। एवं आभिणि०भंगो अप्पसत्थाणं सव्वाणं। सादादीणं आणदभंगो।

१८६. एइंदिएसु साद० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत णि० अणंत०हीणं०। तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० अणंत०हीणं०। मणुस०-मणुसाणु०-उज्जो०-उच्चा० सिया०। तं तु०। पंचिंदियादिबंधगा णिय० बं०। तं तु०। एवं तं तु० पदिदाणं सव्वाणं। सेसाणं

अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार यहां तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी मुख्यतासे जैसा कहा है वैसा जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सहस्रार कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति द्विकको ध्रुव करना चाहिए।

१८५. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार सब अप्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान जानना चाहिए। तथा सातादिककी मुख्यतासे सन्निकर्ष, आनत कल्पमें इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे जिस प्रकार सन्निकर्ष कहा है, उस प्रकारका है।

१८६. एकेन्द्रियोंमें सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति आदिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है

१. ता० आ० प्रत्योः णिमि० णि० उच्चा० इति पाठः।

अप्पज्जत्तभंगो ।

१८७. पंचिंदि०-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-काययोगी० ओघो । ओरालियका० मणुसभंगो। ओरालियमि०आभिणि०दंडओ[1] पंचिं०तिरि०अपज्ज० पढमदंडओ। साददंडओ तिरिक्खोघो[2] । इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-दोआउ०-तिण्णिजादि-चदुसंठा०-चदुसंघ०-आदाउज्जो०-पसत्थवि०-दुस्सर० अपज्जत्तभंगो। मणुसग० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-दु०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगु०हीं० । दोवेदणी०-चदुणोक० सिया० अणंतगु०हीं० । णाम० सत्थाणभंगो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

१८८. वेउव्वियका०-वेउव्वियमि० देवोघं। उज्जोवं ओघं। आहार०-आहारमि० आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-छदंसणा०-असादावे०-चदुसंज०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर-असुभ०-अजस०-पंचंत० णि० । तं तु० । पसत्थाणं धुविगाणं णि० अणंतगुणहीं० ।

तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उन सबकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जैसा सातावेदनीयकी मुख्यतासे कहा है वैसा जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष अपर्याप्तक जीवोंके समान है। अर्थात् पहले जिस प्रकार अपर्याप्तक जीवोंके सन्निकर्ष कह आये हैं उस प्रकार यहां शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१८७. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी और काययोगी जीवोंका भङ्ग ओघके समान है। औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्योंके समान भङ्ग है। औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरण आदि प्रथम दण्डककी मुख्यतासे सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके प्रथम दण्डकके समान है। सातावेदनीयदण्डककी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, दो आयु, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, आतप, उद्योत, प्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष अपर्याप्तकोंके समान है। मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। दो वेदनीय और चार नोकषायका कदाचित बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

१८८. वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है। उद्योत प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। प्रशस्त ध्रुव प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है।

---

१. ता० आ० प्रत्योः ओरालियमि० आभिणिबो० उ० बं०, एवं आभिणिदंडओ इति पाठः।
२. आ० प्रतौ -दंडओ तिरिक्खोघो इति पाठः।

१८९. सादा० उ० बं० अप्पसत्थाणं णि० अणंतगु० । देवगदिपसत्थट्ठावीसं उच्चा० णि० । तं तु० । तित्थकरं सिया० । तं तु० । एवं पसत्थाणं एक्कमेक्कस्स तं तु० ।

१९०. हस्स० उ० बं० धुवियाणं अप्पसत्थाणं असाद०-अथिर-असुभ-अजस० णि० अणंतगु०हीं० । सेसाणं पि णि० अणंतगुण०हीं० । रदि० णि० । तं तु० । एवं रदीए० ।

१९१. कम्मइगका० आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तिरिक्ख०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचंत० णि० । तं तु० । एइंदि०-असंप०-अप्पसत्थवि०-थावरादि०४-दुस्सर० सिया० । तं तु० । पंचिं०-ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदा-उज्जो०-तस०४ सिया० अणंतगु०हीं० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-

---

१८९. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव अप्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे परस्पर सन्निकर्ष कहना चाहिए जो सातावेदनीयकी मुख्यतासे जैसा कहा है उसी प्रकारका है।

१९०. हास्य प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव अप्रशस्त ध्रुव प्रकृतियाँ, असातावेदनीय, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। शेष प्रकृतियोंका भी नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। रतिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार अर्थात् हास्यके समान रतिकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१९१. कार्मणकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर आदि चार और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत और त्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। औदारिक

णिमि० णि० अणंतगु०हीं० । एवं तं तु० पदिदाओ सव्वाओ ।

१९२. साद० उ० बं० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि० अणंत०हीं० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-तित्थय० सिया० तं तु० । पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थ०४-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा० णि० । तं तु० । एवं तं तु० पदिदाओ सव्वाओ । इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-तिण्णिजादि-चदुसंठा०-चदुसंघ० ओघो ।

१९३. इत्थिवेदेसु आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचंत० णि० । तं तु० । णिरयग०-तिरिक्ख०-एइंदि०-दोआणु०-अप्पसत्थवि०-थावर-दुस्सर० सिया० तं तु० । पंचिं[2]०-दोसरीर-वेउव्वि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगु०-

शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियाँ हैं उनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान जानना चाहिए।

१९२. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार तं तु पतित सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, तीन जाति, चार संस्थान और चार संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

१९३. स्त्रीवेदी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्ण चार, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। नरकगति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह

१. ता० आ० प्रत्योः दोआणु० दुवि० अप्पसत्थवि० इति पाठः। २. आ० प्रतौ सिया० पंचि० इति पाठः।

ही० । तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० अणंत०ही० । एवं तं तु० पदिदाणं अण्णमण्णस्स । तं तु० । इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-चदुआउ०-मणुसगदिपंच०-सादादिखविगाणं तिण्णिजादि-चदुसंठा०-चदुसंघ०-सुहुम०-अपज्ज०-साहा० ओघं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

१९४. णिरय० उक्क० बं० ओघं । एवं णिरयाणु०-अप्पसत्थवि०-दुस्सर० । तिरिक्ख० उ० बं० हेट्ठा उवरिं एइंदियसंजुत्ताओ सोधम्मपढमदंडओ ।

१९५. असंप० उ० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तिरिक्ख०३-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-तस०-बादर-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णीचा० पंचंत० णि० अणंतगुणही० । पंचिं०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-अप्पसत्थवि०-पज्जत्तापज्ज० सिया० अणंतगु०-ही० । वेइं० सिया० । तं तु० ।

छह स्थान पतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, दो शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्ण चार, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनकी मुख्यतासे परस्पर सन्निकर्ष जिस प्रकार आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी मुख्यतासे कहा है उस प्रकार जानना चाहिए। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, चार आयु, मनुष्यगति पञ्चक, सातावेदनीय आदि क्षपक प्रकृतियाँ, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

१९४. नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके सब प्रकृतियोंका सन्निकर्ष ओघके समान है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी एकेन्द्रियजाति संयुक्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सौधर्मकल्पके प्रथम दण्डकके समान है।

१९५. असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगतित्रिक, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त और अपर्याप्तका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। द्वीन्द्रियजातिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है।

---

१. आ० प्रतौ० णिमि० णि० पंचंत० इति पाठः ।

१९६. पुरिसेसु ओघो। णवरि उज्जोवं देवोघं।

१९७. णवुंस० आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-उप०-अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ०-णीचा०-पंचंत० णि०। तं तु०। दोगदि-असंप०-दोआणु० सिया०। तं तु०। पंचिं०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णियमा अणंतगु०। दोसरीर-दोअंगो०-उज्जो० सिया० अणंत०हीं०। णिरयग० ओघं।

१९८. तिरिक्ख० उ० बं० असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-अप्पसत्थवि०-दुस्सर० णि०। तं तु०। पंचिं०-ओरालि०अंगो०-तस०४ णि० अणंत०हीं०।

१९९. एइंदि० उ० बं० थावरादि०४ णि०। तं तु०। एवं थावरादि०४। सेसं ओघं।

२००. अवगदवे० आभिणिबो० उ० बं० चदुणा०-चदुदंसणा०-चदुसंजे०-

१९६. पुरुषवेदी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है।

१९७. नपुंसकवेदी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। दो गति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नरकगतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

१९८. तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रसचतुष्कका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणाहीन होता है।

१९९. एकेन्द्रियजातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव स्थावर आदि चारका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार स्थावर आदि चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष भङ्ग ओघके समान है।

२००. अपगतवेदी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला

१. आ० प्रतौ चदुणा० चदुसंज० इति पाठः।

पंचंत० णि० उक्क० । साद०-जस०-उच्चा० णि० अणंतगु०हीं० । एवं अप्पसत्थाणं । साद०-जस०-उच्चा० ओघो । एवं सुहुमसंप० । कोधादि०४ ओघो । णवरि साद०-जस०-उच्चा० उ० बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० णि० अणंतगु० । माणे तिण्णिसंजल० णि० अणंतगु०हीं० । मायाए दोसंज० णि० अणंतगु०हीं० । लोभे ओघं ।

२०१. मदि०-सुद०-आभिणि०दंडओ ओघो । साददंडओ ओघो । णवरि पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि० अणंतगु० । देवगदिसंजुत्ताओ याव जस०-उच्चा०गोद त्ति णि० । तं तु० । सेसं ओघं । एवं विभंगे ।

२०२. आभिणि०-सुद०-ओधि० आभिणि० उ० बं० चदुणा०-छदंसणा०-[असाद०-बारसक०-पुरिसवे०-अरदि०-सोग-भय-दु०-अप्पसत्थ०४-] उप०-अथिर[1]-असुभ-अजस०-पंचंत० णि० । तं तु० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-

जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायका नियमसे उत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है । सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार अप्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है । इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए । क्रोध आदि चार कषायवाले जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । मानमें तीन संज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । मायामें दो संज्वलनका नियमसे बन्ध होता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । लोभमें ओघके समान भङ्ग है ।

२०१. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरण दण्डकका भङ्ग ओघके समान है । सातावेदनीयदण्डकका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि यह पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । देवगतिसंयुक्त प्रकृतियोंसे लेकर यशःकीर्ति और उच्चगोत्र तककी प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । शेष भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार अर्थात् मत्यज्ञानी जीवोंके समान विभङ्गज्ञानी जीवोंके जानना चाहिए ।

२०२. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ-

१. ता० प्रतौ एवं विभंगे आभिणि० उ० बं० चदुणा० छदंस० उप० ..... अथि० इति पाठः ।

दोआणु०--तित्थ० सिया० अणंतगु०हीं० । पंचिं०-तेजा०-क०--समचदु०--पसत्थ०४--अगु०३--पसत्थवि०-तस०४-सुभगं-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा० णि० अणंतगु०हीं० । एवं अप्पसत्थाणं उक्कस्ससंकिलिट्ठाणं ।

२०३. हस्स० उक्क० बं० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पुरिस०-भय-दु०-पंचिंदि०--तेजा०--क०-समचदु०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थवि०--तस०४--अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदे०-अजस०--णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगु० । रदि० णि० । तं तु० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-तित्थ० सिया० अणंतगु०हीं० । एवं रदीए० ।

२०४. मणुसाउ० देवोघं । सादादीणं खविगाणं देवाउ० मणुसगदिपंचगस्स य ओघो । एवं आभिणि०भंगो ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम० । मणपज्ज० आभिणि०भंगो । णवरि असंजदपगदीओ वज्ज । एवं संजद-सामाइय-च्छेदो०-परिहार० । संजदासंज० आभिणि०दंडओ साददंडओ ओधि०भंगो । णवरि संजदासंजदपगदीओ

नाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। उत्कृष्ट संक्लेशसे उत्कृष्ट बन्धको प्राप्त होनेवाली अप्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए।

२०३. हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। रतिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२०४. मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है। सातावेदनीय आदि क्षपक प्रकृतियाँ, देवायु और मनुष्यगतिपञ्चककी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। इसी प्रकार आभिनिबोधिक ज्ञानी जीवोंके समान अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदगसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंका भङ्ग आभिनिबोधिक ज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि असंयतोंके बँधनेवाली प्रकृतियोंको छोड़कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत और परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके कहना चाहिए। संयतासंयत जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरण दण्डक और सातावेदनीय दण्डक अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि संयतासंयत प्रकृतियोंको

१. ता० प्रतौ तस० सुभ० इति पाठः ।

धुविगाओ कादव्वाओ। सेसं ओघो। असंजदेसु मदि०भंगो। णवरि असंजदसम्मादिट्ठि-पगदीओ णादव्वाओ। चक्खु०-अचक्खु० ओघभंगो।

२०५. किण्णाए आभिणि०दंडओ णवुंसगभंगो। साददंडओ णिरयभंगो। चदुआउ० ओघं। णवरि देवाउ० उ० बं० पंचणा०-छदंसणा०-साता०-बारसक०-पंचणोक०-देवगदिअट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणही०। तित्थ० सिया० अणंतगु०। अथवा मिच्छादिट्ठी यदि करेदि तो मिच्छादिट्ठिपगदीओ सम्मादिट्ठि-पगदीओ वि णादव्वाओ।

२०६. देवगदि० उ० बं० पंचणा०-छदंस०-साद०-बारसक०-पंचणोक०-पंचिंदि-यादिपसत्थाओ-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगु०ही०। वेउव्विय०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणुपुव्वि० णि०। तं तु०। तित्थ० सिया०। तं तु०। एव देवगदिभंगो वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु०-तित्थ०। तिरिक्ख०-एइंदि० णवुंसगभंगो। सेसं ओघं।

२०७. णील-काऊणं आभिणि०दंडओ साददंडओ णिरयभंगो। इत्थि०-पुरिस०-

ध्रुव करना चाहिए। शेष भङ्ग ओघके समान है। असंयत जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि असंयतसम्यग्दृष्टि सम्बन्धी प्रकृतियाँ जाननी चाहिए। चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है।

२०५. कृष्णलेश्यामें आभिनिबोधिकज्ञानावरण दण्डक नपुंसकोंके समान जानना चाहिए। सातावेदनीय दण्डक नारकियोंके समान जानना चाहिए। चार आयुओंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि देवायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, देवगति आदि अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्च-गोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। तीर्थ-ङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। अथवा मिथ्यादृष्टि यदि करता है तो मिथ्यादृष्टि प्रकृतियाँ और सम्यग्दृष्टि प्रकृतियाँ भी जाननी चाहिए।

२०६. देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शना-वरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियाँ, निर्माण, उच्चगोत्र, और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार देवगतिके समान वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चगति और एकेन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष नपुंसक जीवोंके समान है। शेष भङ्ग ओघके समान है।

२०७. नील और कापोतलेश्यामें आभिनिबोधिक ज्ञानावरण दण्डक और सातावेदनीय

---

१. आ० प्रतौ मिच्छादिट्ठिपगदीओ वि इति पाठः। २. आ० प्रतौ अणंतगु०ही०। वेउव्वि० अंगो० इति पाठः।

हस्स-रदि-चदुसंठा०-चदुसंघ०-उज्जो० णिरयभंगो। चदुआउ० ओघं। णवरि देवाउ० उ० बं० पंचणा०-छदंसणा०-साद०-बारसक०-पंचणोक०-देवगदिअट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणही०। तित्थ० सिया० अणंतगुणही०। अथवा पुण मिच्छादिट्ठिस्स पि होदि तदो णादव्वा विभासा। णिरयगदि० उ० बं० णिरयाणु० णि०। तं तु०। सेसाओ णि० अणंतगु०। एवं णिरयाणु०। देवगदि४-तित्थय० किण्ण०-भंगो। चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ णवुंसगभंगो। उज्जोवं पढमपुढविभंगो। काऊए तित्थ० णिरयभंगो।

२०८. तेऊए आभिणि०दंडओ सोधम्मभंगो। साददंडओ परिहार०भंगो। इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-दोआउ०-चदुसंठा०-पंचसंघ० सोधम्मभंगो। देवाउ० ओघो। मणुसगदिपंचगं ओघं। एवं पम्माए वि। णवरि अप्पसत्थाणं सहस्सारभंगो णादव्वो। सुक्काए आभिणि०दंडओ इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-मणुसाउ०-चदुसंठा०-चदुसंघ० आणदभंगो। सेसं ओघं।

२०९. भवसि० ओघं। अब्भवसि० आभिणि०दंडओ ओघं। साद० उ० बं० पंचणा०- णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि०

दण्डकका भङ्ग नारकियोंके समान है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, चार, संस्थान, चार संहनन और उद्योतका भङ्ग नारकियोंके समान है। चार आयुका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि देवायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, देवगति आदि अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। अथवा यदि मिथ्यादृष्टिके भी होता है तो विकल्प जानना चाहिए। नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग का भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कृष्णलेश्याके समान है। चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष नपुंसक जीवोंके समान है। उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष पहली पृथिवीके समान है। कापोतलेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष नारकियोंके समान है।

२०८. पीत लेश्यामें आभिनिबोधिक ज्ञानावरण दण्डकका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। सातावेदनीयदण्डकका भङ्ग परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, दो आयु, चार संस्थान और पाँच संहननका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। देवायुका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगति पञ्चकका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्यामें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसमें अप्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रार कल्पके समान है। शुक्ललेश्यामें आभिनिबोधिकज्ञानावरणदण्डक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, मनुष्यायु, चार संस्थान और चार संहननका भङ्ग आनत कल्पके समान है। शेष भङ्ग ओघके समान है।

२०९. भव्य जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। अभव्य जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरण दण्डक ओघके समान है। सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण

अणंतगु० । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० अणंतगु० । मणुसगदिपंचग-देवगदि४-उज्जो०-उच्चा० सिया० । तं तु० चाचादि०-तेजा०-क० समचदु०-पसत्थ०[४-] अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णिय० । तं तु० । एवं उच्चागोदं पि । णवरि तिरिक्खसंजुत्तं वज्ज ।

२१०. मणुस-देवगदि० उ० बं० पसत्थाणं णि० । तं तु० । अप्पसत्थाणं अणंतगु०हीं० । एवं मणुसाणु०-देवगदि०४ ।

२११. ओरालि० उ० बं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० अणंतगु० । मणुसग०-मणुसाणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । सेसं मणुसगदिभंगो । एवं ओरालि०-अंगो०-वज्जरि० । एवं उज्जो० । सेसं ओघो ।

२१२. सासणे आभिणि० उ० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-सोलसक०-

नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। मनुष्यगतिपञ्चक, देवगति चतुष्क, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार उच्चगोत्रकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगतिसंयुक्त प्रकृतियोंको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२१०. मनुष्यगति और देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। अप्रशस्त प्रकृतियोंका अनुत्कृष्ट अनन्तगुणहीन बन्ध करता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वी और देवगतिचतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२११. औदारिक शरीरके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिरूप होता है। शेष भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार उद्योत प्रकृतिकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष भङ्ग ओघके समान है।

२१२. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध

---

१. आ० प्रतौ अप्पसत्थ४ उज्जो० इति पाठः ।

प्रकाशक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इत्थि०--अरदि--सोग-भय--दुगुं०--तिरिक्ख०--वामण०-खीलिय०--अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ०-णीचा०-पंचंत० णि० । तं तु० । पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०--क०--ओरालि०अंगो०--पसत्थ०४--अगु०३-तस०४-णिमि० णी० अणंतगु०हीं० । उज्जोवं सिया० अणंतगु० । एवं तं तु० पदिदाणं ।

२१३. साद० उ० बं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० अणंतगुं० । दोगदि-दोसरीर--दोअंगो०-वज्जरिस०-दोआणु०--उज्जो०-उच्चा० सिया० । तं तु० । पंचणाणावरणादिअप्पसत्थाणं णिय० अणंतगु० । पंचिंदियादिपसत्थाणं णि० । तं तु० । इत्थि०-पुरिस०--हस्स-रदि--तिण्णिआउ-तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ०-उज्जो० ओघं । सेसाणं कम्माणं हेट्ठा[2] उवरिं सादभंगो । णाम० सत्थाणभंगो ।

२१४. सम्मामिच्छादिट्ठी० आभिणि०भंगो । मिच्छादिट्ठी० मदि०भंगो । ओरालि० उ० बं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० अणंतगुणही० । मणुसगदि-

करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, सोलह कषाय, स्त्रीवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, वामन संस्थान, कीलक संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार तं तु पतित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२१३. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पाँच ज्ञानावरणादि अप्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, तीन आयु, तीन संस्थान, तीन संहनन और उद्योतका भङ्ग ओघके समान है । शेष कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है ।

२१४. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है । मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है । किन्तु औदारिक शरीरके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता

१. आ० प्रतौ तिरिक्खाणु० अणंतगु० इति पाठः । २. ता० आ० प्रत्योः सेसाणं णामाणं हेट्ठा इति पाठः ।

उज्जोवं सिया० । तं तु[1]० । ओरालि०अंगो०-वज्जरि० णि० । तं तु० । सेसाओ पसत्थाओ णि० अणंतगु० । एवं ओरालिअंगो०-वज्जरि० ।

२१५. सण्णि० ओघं । असण्णी० तिरिक्खोघो । साददंडओ मदि०भंगो । आहारअचक्खु०-भवसि०-सण्णि-आहार० ओघं । अणाहार० कम्मइग०भंगो ।

एवं उक्कस्सं सम्मत्तं ।

२१६. जहण्णपरत्थाणसण्णियासे पगदं । दुवि०--ओघे० आदे० । ओघे० आभिणि० जह० अणुभागं बंधंतो चदुणा०-चदुदंस०-पंचंत० णि० बं० जहण्णा । साद०-जस०-उच्चा० णि० बं० णि० अजहण्णं अणंतगुणब्भहियं बंधदि । एवं चदुणा०-चदुदंस०-पंचंत० ।

२१७. णिद्दाणिद्दाए जहण्णं बं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-बारसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थवि०--तस०४-थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा[2]०-

है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । मनुष्यगति और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभनाराच संहननका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । शेष प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२१५. संज्ञियोंमें ओघके समान भङ्ग है । असंज्ञियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि सातावेदनीयदण्डक मत्यज्ञानी जीवोंके समान है । आहारक जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है । अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट सन्निकर्ष समाप्त हुआ ।

२१६. जघन्य परस्थान सन्निकर्षका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है— ओघ और आदेश । ओघसे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके जघन्य अनुभागका नियमसे बन्ध करता है । सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे अजघन्य अनन्तगुणे अधिक अनुभागका बन्ध करता है । इसी प्रकार चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२१७. निद्रानिद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो

१. ता० प्रतौ उज्जोवं तं तु० इति पाठः । २. आ० प्रतौ णिमि० णि० उच्चा० इति पाठः ।

पंचंत०-णि०बं० णि० अज० अणंतगु० । पचलापचला-थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणु०४ णि० । तं तु० । छट्ठाणपदिदं बं० अणंतभागब्भहियं वा ५ । एवं पचलापचला०-थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणु०४ ।

२१८. णिद्दाए ज० बं० पंचणा०-चदुदंस०-सादा०-चदुसंज०-पंचणोक०-णामाणि णिद्दाणिद्दाए भंगो । उच्चा०-पंचंत० [णि०] अणंतगुणब्भ० । पचला० णि० । तं तु० छट्ठाणपदिदं० । आहारदुग-तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं पचला० ।

२१९. साद० ज० बं० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दु०-तेजा०-क०-पसत्था-पसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० णिय० अणंतगुणब्भ० । थीणगिद्धि३-मिच्छ०-बारसक०-सत्तणोक०-तिरिक्ख०-पंचिंदि०-दोसरीर-दोअंगो०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तस०४-तित्थ०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भ० । तिण्णि-आउ-दोगदि-चदुजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थिरादिछयुग०-उच्चा०

नियमसे अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप बन्ध करता है। अर्थात् या तो अनन्तभागवृद्धिरूप या असंख्यात-भागवृद्धिरूप, संख्यातभागवृद्धिरूप, संख्यातगुणवृद्धिरूप, असंख्यातगुणवृद्धिरूप या अनन्तगुण-वृद्धिरूप बन्ध करता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व, और अनन्तानुबन्धी चार की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१८. निद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय और नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान है। उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। प्रचलाका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। आहारकद्विक और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१९. सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, सात नोकषाय, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, त्रसचतुष्क, तीर्थङ्कर और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तीन आयु, दो गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थिर आदि छह युगल और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार

सिया० । तं तु० । एवं असाद०-अथिर-असुभ-अजस० । णवरि णिरयाणु-णिरयगदि-देवगदि-दोआणु० सिया० । तं तु० । देवाउ० वज्ज ।

२२०. अपच्चक्खा० कोध० ज० बं० तिण्णि क० । तं तु० । सेसं णिद्दाए भंगो । णवरि अट्ठकसायं भाणिदव्वं[1] । एवं तिण्णं क० ।

२२१. पच्चक्खाण० कोध० ज० बं० तिण्णि क० णि० । तं तु० । सेसं णिद्दाए भंगो । एवं तिण्णं क० ।

२२२. कोधसंज० ज० बं० पंचणा०-चदुदंस०-सादा०-तिण्णिसंज०-जसगि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । माणसंज० ज० बं० दोसंज० णि० अणंतगुणब्भ० । सेसं० कोधभंगो । मायसंज० ज० बं० लोभसंज० णि० अणंतगुणब्भ० । सेसं माणभंगो । लोभसंज० ज० बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा० जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० ।

२२३. इत्थि० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-

असातावेदनीय, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि नरकायु, नरकगति, देवगति और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । मात्र देवायुको छोड़कर इन असातावेदनीय आदिकी मुख्यतासे यह सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

२२०. अप्रत्याख्यानावरण क्रोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन कषायोंका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग निद्राके समान है । इतनी विशेषता है कि आठ कषाय कहलाना चाहिए । इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२२१. प्रत्याख्यानावरण क्रोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन कषायोंका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । शेष भङ्ग निद्राप्रकृतिके समान है । इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२२२. क्रोध संज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, तीन संज्वलन, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । मानसंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो संज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष भङ्ग क्रोध संज्वलनके समान है । मायासंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव लोभ संज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष भङ्ग मान संज्वलनके समान है । लोभ संज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है ।

२२३. स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण,

---

१. ता० प्रतौ भणिदव्वं इति पाठः ।

पंचिंदि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । सादासाद०-चदुणोक०-तिण्णिगदि-दोसरीर-तिण्णिसंठा०-दोअंगो०-तिण्णिसंघ०-तिण्णिआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०-णीचुच्चागो० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं णवुंस० । णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ० सिया० अणंतगुणब्भ० ।

२२४. पुरिस० ज० बं० कोधसंजलणभंगो । णवरि चदुसंज० णि० अणंतगुणब्भ० ।

२२५. हस्स० ज० बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा[1]०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । रदि-भय-दु० णियमा । तं तु० । एवं रदि-भय-दु० ।

२२६. अरदि० ज० बं० पंचणा०-छदंसणा-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-भय-दु०-देवगदि-पसत्थट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । तित्थ० सिया० अणंत-गुणब्भ० । सोग० णि० । तं तु० । एवं सोग० ।

मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, चार पंचेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्ण-चतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय, तीन गति, दो शरीर, तीन संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, तीन संहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, नीचगोत्र और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच संस्थान और पाँच संहननका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है।

२२४. पुरुषवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग क्रोध संज्वलनके समान है। इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है।

२२५. हास्यप्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। रति, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार रति, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२२६. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। शोकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

---

१. आ० प्रतौ पंचणा० सादा० इति पाठः ।

२२७. णिरयाउ० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-पंचि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । असाद०-णिरय०-हुंड०-णिरयाणु०-अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ० णि० । तं तु० । एवं णिरयगदि-णिरयाणु० ।

२२८. तिरिक्खाउ० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दु०-तिरिक्ख०-ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०३-उप०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। सादासा०-चदुजादि-असंप०-थावर-सुहुम-साधार० सिया० । तं तु० । चदुणोक०-पंचिं०-ओरालि०अंगो०-तस०-बादर-पत्ते० सिया० अणंतगुणब्भ० । हुंड०-अपज्ज०-अथिरादिपंच० णि० । तं तु० । मणुसाउ० ज० तिरिक्खाउ०भंगो[3] । णवरि मणुस०-हुंड०-असंप०-मणुसाणु०-अपज्ज०-अथिरादिपंच णि० । तं तु० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२२७. नरकायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। असातावेदनीय, नरकगति, हुण्डसंस्थान, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वी की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२२८. तिर्यञ्चायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, उपघात, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। चार नोकषाय, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, त्रस, बादर और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। हुण्ड संस्थान, अपर्याप्त और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। मनुष्यायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग तिर्यञ्चायुके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अपर्याप्त और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका

१. आ० प्रतौ तस० णिमि० इति पाठः । २. आ० प्रतौ पत्ते० अणंतगुणब्भ० इति पाठः ।
३. आ० प्रतौ मणुसाउ० उ० तिरिक्खभंगो इति पाठः ।

२२९. देवाउ० ज० बं० पंचणा०--णवदंसणा०--मिच्छ०--सोलसक०-भय-दु०-पंचिं०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० णिय० अणंतगुणब्भ० । सादा०--देवग०--समचदु०--देवाणु०--पसत्थवि०-थिरादिछ०-उच्चा० णि० । तं तु० । इत्थि०-पुरिस० सिया० अणंतगुणब्भ० ।

२३०. तिरिक्ख० ज० बं० पंचणा०--णवदंस०--सादा०-मिच्छ०--सोलसक०-पंचणोक०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो । णीचा० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-णीचा० ।

२३१. मणुस० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । सादासाद०-मणुसाउ०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-अपज्ज०-थिरादिछयुग०-उच्चा० सिया० । तं तु० । सत्तणोक०-पर०-उस्सा०-पज्ज०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भ० । पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो-पसत्था-

भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है ।

२२९. देवायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, देवगति, समचतुरस्रसंस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है ।

२३०. तिर्यञ्चगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है । नीचगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२३१. मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, मनुष्यायु, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, अपर्याप्त, स्थिर आदि छह युगल और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । सात नोकषाय, परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर,

१. आ० प्रतौ सादासाद० इति पाठः ।

पसत्थ०४–अगु०-उप०-तस०-बादर-पत्ते०-णिमि० णि० अणंतगुणब्भ०। मणुसाणु० णि०। तं तु०। एवं मणुसाणु०।

२३२. देवगदि[1]० ज० बं पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। सादासाद०-देवाउ० सिया०। तं तु०। इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० अणंतगुणब्भ०। उच्चा० णि०। तं तु०। णाम० सत्थाणभंगो। एवं देवाणु०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२३३. एइंदि० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय०-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। सादासाद०-तिरिक्खाउ० सिया०। तं तु०। हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० अणंतगुणब्भ०। णाम० सत्थाणभंगो। एवं बेइं०-तेइं०-चदुरिं० हेट्ठा उवरिं एइंदियभंगो। णाम० सत्थाणभंगो।

औदारिकआङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२३२. देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और देवायुका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२३३. एकेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, और तिर्यञ्चायुका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका सन्निकर्ष एकेन्द्रिय जातिके समान है तथा नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

---

१. ता० प्रतौ एवं मणुसाणु०। णि० तं तु० एवं मणु० [एतच्चिन्हान्तर्गतः पाठोऽधिकः प्रतीयते।] देवगदि०, आ० प्रतौ एवं मणुसाणु० णि० तं तु० एवं मणुस० देवगदि० इति पाठः। २. आ० प्रतौ सोलसक० णवुंस० भयदु० णीचा० पंचंत० इति पाठः।

२३४. पंचिंदि० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं तस० ।

२३५. ओरालि० जं० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०--णीचा०--पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं उज्जो० ।

२३६. वेउव्वि० ज० बं० हेट्ठा उवरिं पंचिंदिय०भंगो । णाम० सत्थाणभंगो । एवं वेउव्वि०अंगो० ।

२३७. आहार० ज० बं० पंचणा०-छदंस०-सादा०-चदुसंज०-पंचणोक०-देवगदिपसत्थट्ठावीसं-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । आहार०अंगो[1]० णि० । तं तु० । तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं आहारंगोवंग० ।

२३८. तेजाक० हेट्ठा उवरिं पंचिंदियभंगो । णाम० सत्थाणभंगो । एवं तेजइग-भंगो कम्मइ०-पसत्थवण्ण४—अगु० ३—बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० ।

---

२३४. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार त्रस प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२३५. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२३६. वैक्रियिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय जातिके समान है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२३७. आहारकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। आहारक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार आहारक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२३८. तैजसशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय जातिके समान है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार तैजसशरीरके समान कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

---

१. ता० आ० प्रत्योः आहारभंगो० इति पाठः।

२३९. समचदु० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचंत० णि०अणंतगुणब्भ०। सादासाद०-देवाउ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। सत्तणोक०-दोआउ०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भ०। णाम० सत्थाणभंगो। एवं पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०।

२४०. णग्गोद० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचंत० णिय० अणंतगुणब्भ०। सादासाद०-उच्चा० सिया०। तं तु०। सत्तणोक०-दोआउ०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भ०। णाम० सत्थाणभंगो। एवं णग्गोद०भंगो तिण्णिसंठा०-पंचसंघ०।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२४१. हुंड० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। दोवेदणी०-तिण्णिआउ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। सत्तणोक०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भहियं०। णाम० सत्थाणभंगो। एवं हुंड०भंगो दूभग-अणादे०।

---

२३९. समचतुरस्र संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, देवायु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय, दो आयु और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४०. न्यग्रोध संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय, दो आयु और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार न्यग्रोध संस्थानके समान तीन संस्थान और पाँच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४१. हुण्ड संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो वेदनीय, तीन आयु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय और नीचगोत्र का कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार हुण्ड संस्थानके समान दुर्भग और अनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४२. ओरालि०अंगो ज० बं० हेट्ठा उवरिं ओरालिय०भंगो। णाम० सत्थाणभंगो।

२४३. असंप० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दुगुं०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। दोवेदणी०-तिरिक्ख०-मणुसाउ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। सत्तणोक०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भ०। णाम० सत्थाणभंगो।

२४४. आदाउज्जो० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। णाम० सत्थाणभंगो०।

२४५. अप्पसत्थवि० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० सादासाद०-णिरयाउ०-दुच्चा० सिया० तं तु०। सत्तणोक०-दोआउ०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भ०। णाम० सत्थाणभंगो। एवं दुस्सर०।

२४६. सुहुम० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय०-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। सादासाद०-तिरिक्खाउ० सिया०। तं तु०।

---

२४२. औदारिक आङ्गोपाङ्गके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका भंग औदारिकशरीरके समान है। तथा नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

२४३. असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो वेदनीय, तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

२४४. आतप और उद्योतके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

२४५. अप्रशस्त विहायोगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, नरकायु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय, दो आयु और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४६. सूक्ष्मके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और तिर्यञ्चायुका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अज-

चदुणोक० सिया० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं अपज्ज०-साधार० । णवरि अपज्जत्तो दोआउ० सिया० । तं तु० ।

२४७. थिर० ज० बं० पंचणा०-छदंस०-चदुसंज०-भय०-दु०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-बारसक०-सत्तणोक०-तिरिक्ख-मणुसाउ०-णीचा० सिया० अणंतगु० । सादासाद०-देवाउ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं सुभ-जस० ।

२४८. [illegible] बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दु०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो ।

२४९. उच्चा० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचिं०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भहियं० । सादासाद०-देवाउ०-छसंठा०-छस्संघ०-दोगदि-दोआणु०-दोविहा०-

---

घन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार अपर्याप्त और साधारण प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपर्याप्तके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो आयुओंका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

२४७. स्थिरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, सात नोकषाय, तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, देवायु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४८. तीर्थङ्कर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है।

२४९. उच्चगोत्रके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, देवायु, छह संस्थान, छह संहनन, दो गति, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो

थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । सत्तणोक०-मणुसाउ०-दोसरीर-दोअंगो० सिया० अणंतगुणब्भहियं बंधदि ।

२५०. आदेसेण णिरएसु आभिणि० ज० बं० चदुणा०-छदंसणा०-बारसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि० । तं तु० । साद०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ०-४-मणुसाणु०-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा० णि० अणंतगुणब्भ० । तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं आभिणि०भंगो० तं तु० पदिदाणं सव्वाणं ।

२५१. णिद्दाणिद्दाए ज० बं० पंचणा०-छदंस०-साद०-बारसक०-पंचणोक०-पंचिं०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगु० । पचला-पचला०-थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणु०४ णि० । तं तु० । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० । तं तु० । मणुस०-मणुसाणु०-उज्जो०-उच्चा० सिया० अणंतगुणब्भ० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय, मनुष्यायु, दो शरीर और दो आङ्गोपाङ्गका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक अनुभागबन्ध करता है।

२५०. आदेशसे नारकियोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सातावेदनीय, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदिछह, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तं तु पतित सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष आभिनिबोधिक ज्ञानावरणके समान जानना चाहिए।

२५१. निद्रानिद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचारका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्या-

१. आ० प्रतौ थीणगिद्धि०३ मिच्छा० इति पाठः ।

एवं पचलापचला०-थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणु०४ ।

२५२. साद० ज० बं० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय०-दु०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क० - ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगु० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४-सत्तणोक०-तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-तित्थ०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भ० । दोआउ०-मणुसग०-छस्संठा०-छस्संघ०-मणुसाणु०-दोविहा०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । एवं सादभंगो असाद०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० ।

२५३. इत्थि० ज० बं० पंचणा० -णवदंस० - मिच्छ०-सोलसक० - भय - दु०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । सादासाद०-चदुणोक०-दोगदि-तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०-दोगोद० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं णवुंस० । णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ० सिया० अणंतगुणब्भ० ।

मोक्षदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

नुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे जानना चाहिए।

२५२. सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। स्त्यानगृद्धित्रिक, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, सात नोकषाय, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, तीर्थङ्कर और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो आयु, मनुष्यगति, छह संस्थान, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार सातावेदनीयके समान असातावेदनीय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५३. स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय, दो गति, तीन संस्थान, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह पाँच संस्थान और पाँच संहननका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य

२५४. अरदि० ज० बं० पंचणा०-छदंसणा०-सादावे०-बारसक०-पुरिस०-भय-दु०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिर-सुभ-सुभग-सुस्सर-आदे०-जसगि०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । सिया० । तं तु० । एवं सोग० । सोग० णि० । तं तु० । एवं सोग० ।

२५५. तिरिक्खाउ० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-तिरिक्ख०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । सादासाद०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । सत्तणोक०-उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं मणुसाउ० । णवरि सत्तणोक०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भ० । सादादि याव उच्चा० सिया० । तं तु० । मणुस०-मणुसाणु०

अनन्तगुणा अधिक होता है ।

२५४. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। शोकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शोकको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५५. तिर्यञ्चायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सात नोकषाय और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीयसे लेकर उच्चगोत्र तककी प्रकृतियोंका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका

१. ता० प्रतौ० ज० बं० पं० (?) पंचणा० इति पाठः। २. ता० आ० प्रत्योः मणुसाणु० इति पाठः।

मणुसाउ०भंगो० ।

२५६. पंचिंदि० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाण-भंगो । एवं पंचिंदियभंगो ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-उज्जो०-तस०४-णिमि० ।

२५७. समचदु० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-णि० अणंतगुणब्भ० । सादासाद०-दोआउ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । सत्तणोक०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं समचदुर०भंगो पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोविहा०-सुभादितिण्णियुग० ।

२५८. तित्थ० ज० बं० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दु०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो ।

२५९. उच्चा० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय० दु०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४[1]-

बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष मनुष्यायुके समान जानना चाहिए ।

२५६. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, उद्योत, त्रसचतुष्क और निर्माणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२५७. समचतुरस्रसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, दो आयु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । सात नोकषाय और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है । इसी प्रकार समचतुरस्रसंस्थानके समान पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो विहायोगति और शुभादि तीन युगलकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२५८. तीर्थङ्कर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है ।

२५९. उच्चगोत्रके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर,

१. आ० प्रतौ पसत्थापसत्थ० ४ तस० ४ इति पाठः ।

णिमि० णि० अणंतगुणब्भ० । सादासाद०-मणुसाउ०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थिरादिछयुग० सिया० । तं तु० । सत्तणोक० सिया० अणंतगुणब्भ० । मणुसगदि-मणुसाणु० णि० । तं तु० । एवं सत्तमाए पुढवीए । णवरि मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० तित्थयरभंगो । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४-इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंच-संघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे०-णीचा० एदेसिं तिरिक्खगदी धुवं कादव्वं । णवरि थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४ ज० बं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० [illegible] तु० [illegible] । णवरि साद० ज० बं० दोगदि-दोआणु०-उज्जो०-दोगो० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं असाद०-थिरादितिण्णियुगलाणं । छसु उवरिमासु णिरयोघो । णवरि तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० परियत्त-माणियाणं कादव्वं[1] । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४-इत्थि-णवुंसगाणं मणुसगदि-दुगं कादव्वं ।

कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, मनुष्यायु, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थङ्कर प्रकृतिके समान है। तथा स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्र इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय तिर्यञ्चगतिको ध्रुव करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह स्त्यानगृद्धि तीन आदिकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान ही जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो आनुपूर्वी, उद्योत और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार असातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। प्रारम्भकी छह पृथिवियोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रको परिवर्तमान प्रकृतियोंमें करना चाहिए। तथा स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके मनुष्यगति द्विक करना चाहिए।

१. ता० प्रतौ परियमाणि कादव्वं इति पाठः ।

२६०. तिरिक्खेसु आभिणि० ज० बं० चदुणा०-छदंस०-अट्ठकसा०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०-४-उप०-पंचंत० णिय० । तं तु० । साद०-देवग०पसत्थसत्तावीसं-उच्चा० णि० अणंतगुणब्भ० । एवं तं तु पदिदाओ अण्णमण्णस्स तं तु० । सेसं ओघं । णवरि अरदि० ज० बं० पंचणा०-छदंस०-अट्ठक०-पुरिस०-भय-दु०-उच्चा०-पंचंत० णि अणंतगुणब्भ० । सेसं णामाणं णाणावरणभंगो । एवं पंचिंदिय०तिरि०३ । णवरि तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० परियत्तमाणियाणं कादव्वं तिरिक्खेसु० । णवरि पंचिंदियजादीणं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-उज्जो०-तिरिक्खगदिदुग० अप्पप्पणो सत्थाणं कादव्वं ।

२६१. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तएसु आभिणि० ज० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि० । तं तु० । साद०-मणुस०-पंचिंदि०-तिण्णिसरीर-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-पसत्थवि०-तस४-थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा० णि० अणंतगुणब्भ० । एवं तं तु० पदिदाओ अण्णोणं तं तु० ।

२६०. तिर्यञ्चोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त, वर्णचतुष्क उपघात, और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सातावेदनीय, देवगति आदि प्रशस्त सत्ताईस प्रकृतियाँ और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियाँ हैं उनकी मुख्यतासे परस्पर आभिनिबोधिकज्ञानावरणकी मुख्यतासे जिस प्रकार सन्निकर्ष कहा है उस प्रकार जानना चाहिए। शेष भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। शेष नामकर्मकी प्रकृतियोंका ज्ञानावरणके समान भङ्ग है। इसी प्रकार अर्थात् सामान्य तिर्यञ्चोंके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रको परिवर्तमान प्रकृतियोंमें करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रियजाति आदिमें औदारिकशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, उद्योत और तिर्यञ्चगतिद्विकका अपना अपना स्वस्थान सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२६१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सातावेदनीय, मनुष्य गति, पञ्चेन्द्रियजाति, तीन शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक

१. आ० प्रतौ चदुणोक० इति पाठः।

२६२. साद० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। सत्तणोक०-ओरा०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ०। दो आउ०-दोगदि-पंचजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-तस-थावरादिदसयुग०-दोगो० सिया०। तं तु०। एवं सादभंगो असाद०-अथिर-असुभ०-अजस०।

२६३. इत्थि० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-मणुस०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थवि०तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। सादासाद०-चदुणोक०-तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ०-थिरादितिण्णियुग० सिया अणंतगुणब्भ०। एवं णवुंस०। णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ०।

२६४. अरदि० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-

होता है। इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनकी मुख्यतासे परस्पर सन्निकर्ष आभिनिबोधिकज्ञानावरणके समान जानना चाहिए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२६२. सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सात नोकषाय, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो आयु, दो गति, पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस-स्थावर आदि दस युगल और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार सातावेदनीयके समान असातावेदनीय, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२६३. स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र, और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय, तीन संस्थान, तीन संहनन और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसमें पाँच संस्थान और पाँच संहनन कहने चाहिए।

२६४. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण,

---

१. ता० प्रतौ पंचजादि० छस्संघ० इति पाठः। २. ता० प्रतौ अगु० पसत्थापसत्थ० इति पाठः।

०-दु०-मणुस[1]०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । सादासाद०-थिरादितिण्णियुग० सिया० अणंतगुणब्भ० । सोग० णि० । तं तु० । एवं सोग० । तिरिख०-मणुसाउ०-मणुसग०-मणुसाणु० ओघं ।

२६५. तिरिक्ख० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । सादासाद०-तिरिक्खाउ० सिया० । तं तु० । सत्त-णोक० सिया० अणंतगुणब्भ० । णीचा० णि० । तं तु० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं तिरिक्खाणु०-णीचा० । चदुजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थिरादि०४ ओघं ।

२६६. पंचिंदि० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचंत० णियमा० अणंतगुणब्भ० । सादासाद०-दोआउ०-दोगोद० सिया० । तं तु० ।

मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आंगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। शोकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु, मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

२६५. तिर्यञ्चगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और तिर्यञ्चायुका कदाचित् बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नीचगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि चार युगलकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

२६६. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, दो आयु और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह

---

१ ता० प्रतौ भय० मणु० इति पाठः ।

सत्तणोक० सिया० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं पंचिंदियजादिभंगो तस०४ । थिरादिछयुग० हेट्ठा उवरिं पंचिंदियभंगो । णामाणं अप्पप्पणो सत्थाणभंगो ।

२६७. ओरालि० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असाद०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णीचा०-पंचंत० णिय० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं ओरालियभंगो तेजा०-क०-पसत्थव०४-अगु०-णिमि०-ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा० । आदाउज्जो० एवं चेव । सादासाद०-चदुणोक०सिया० अणंतगुणब्भ० । णाम० सत्थाणभंगो । उच्चा० ओघो । णवरि पंचिंदिय० णि० । तंतु० । एवं सव्वअपज्जत्ताणं सव्वविगलिंदियाणं पुढ०-आउ०-वणप्फदि०-बादरपत्ते०-णियोदाणं च । तेऊणं [वाऊणं] पि एवं चेव । णवरि मणुसगदिचदुक्कं वज्ज । तिरिक्खगदिधुविगाणं सव्वाणं आभिणि०भंगो । एइंदिएसु अपज्जत्तभंगो । णवरि तिरिक्खगदितिगं तिरिक्खोघं ।

२६८. मणुस०३ खविगाणं संजमपाओग्गाणं ओघं । सेसाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियजातिके समान त्रसचतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। स्थिर आदि छह युगलकी मुख्यतासे नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रियजातिके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग अपने अपने स्वस्थान सन्निकर्षके समान जानना चाहिए।

२६७. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार औदारिकशरीरके समान तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, निर्माण, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात और उच्छ्वासकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। आतप और उद्योतकी मुख्यतासे भी इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि यह सातावेदनीय, असातावेदनीय, और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। उच्चगोत्रकी मुख्यतासे ओघके समान सन्निकर्ष है। इतनी विशेषता है कि यह पञ्चेन्द्रिय जातिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु यह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो यह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार अर्थात् पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान सब अपर्याप्तक, सब विकलेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, जलकायिक, वनस्पतिकायिक, वनस्पतिकायिक बादर प्रत्येक और निगोद जीवोंके जानना चाहिए। अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंके भी इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति चतुष्कको छोड़कर जानना चाहिए। तथा तिर्यञ्चगति आदि सब ध्रुव प्रकृतियोंका भङ्ग आभिनिबोधिकज्ञानावरणके समान है। एकेन्द्रियोंमें अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगतित्रिकका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है।

२६८. मनुष्यत्रिकमें क्षपक प्रकृतियाँ और संयम प्रायोग्य प्रकृतियाँ इनका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है।

२६९. देवेसु सत्तण्णं कम्माणं पढमपुढविभंगो। सादावे० ज० बं० दोगदि-एइंदि०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थावर-थिरादिछयुग०-दोगो० सिया०। तं तु०। पंचिं०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस०-तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ०। सेसाणं णिरयभंगो। णामाणं तिरिक्खगदितिगं परियत्तमाणियाणं कादव्वं। एइंदि०-आदाव-थावर० ओघं। पंचिं०-ओरालि०अंगो०-तस० णिरयभंगो। णाम० सत्थाणभंगो। सेसं पढमपुढविभंगो।

२७०. भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोधम्मीसाणं सत्तण्णं कम्माणं देवोघं। णामाणं हेट्ठा[2] उवरिं देवोघं। णवरि णामाणं अप्पप्पणो सत्थाणभंगो। सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति पढमपुढविभंगो। आणद याव णवगेवज्ज त्ति सत्तण्णं कम्माणं एवं चेव। णामाणं पि तं चेव। णवरि मणुस० ज० बं पंचणा०-णवदंस०-असाद०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। णामाणं सत्थाणभंगो। एवं सव्वसंकिलिट्ठाणं। मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२७१. अणुदिस याव सव्वट्ठ त्ति आभिणि०दंडओ देवोघं। साद० ज० बं०पंचणा०-

---

२६९. देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग पहली पृथिवीके समान है। सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, एकेन्द्रियजाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर, स्थिर आदि छह युगल और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत, त्रस और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। किन्तु नामकर्मकी तिर्यञ्चगतित्रिकको परिवर्तमान करना चाहिए। एकेन्द्रियजाति, आतप और स्थावरका भङ्ग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रसप्रकृतिका भङ्ग नारकियोंके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। शेष भंग पहली पृथिवीके समान है।

२७०. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म-ऐशान कल्पके देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। नामकर्मके पहले और अन्तकी प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग अपने अपने स्वस्थानके समान है। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग इसी प्रकार है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग भी उसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार सर्व संक्लेशसे जघन्य बंधनेवाली प्रकृतियोंके सम्बन्धमें जानना चाहिए।

२७१. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरण दण्डकका

---

१. ता० आ० प्रत्योः थावरादि इति पाठः। २. आ० प्रतौ णाम सत्थाणं हेट्ठा इति पाठः।

छदंस०-बारसक०-पुरिस०-भय-दु०-मणुसगदि-पंचिं०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । चदुणोक०-तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । मणुसाउ०-थिरादितिण्णियुग० सिया० । तं तु० । एवं सादभंगो असाद०-मणुसाउ०-थिरादितिण्णियुग० । अरदि-सोगं देवोघं० ।

२७२. मणुसग० ज० बं० पंचणा०-छदंस०-असादा०-बारसक०-पंचणोक०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । उच्चा० णि० । तं तु० । णाम० सत्थाणभंगो० । एवं सव्वसंकिलिट्ठाण भंगो उच्चा० ।

२७३. पंचिंदि०-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगी० ओघो । ओरालि० मणुसभंगो[1] । णवरि तिरिक्ख०३ मूलोघं । ओरालियमि० आभिणि०दंडओ तिरिक्खोघं । णवरि बारसक० णि० । तं तु० । तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । थीण-

भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। चार नोकषाय और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यायु और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार सातावेदनीयके समान असातावेदनीय, मनुष्यायु और स्थिर आदि तीन युगलकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अरति और शोकका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है।

२७२. मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इस प्रकार सर्व संक्लेशसे जघन्य बन्धको प्राप्त होनेवाली प्रकृतियोंके समान उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२७३. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी और काययोगी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्योंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगतित्रिकका भङ्ग मूलोघके समान है। औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरण दण्डकका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि बारह कषायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य

१. ता० आ० प्रत्योः मणुसगदिभंगो इति पाठः ।

गिद्धि०३–अणंताणुबं०४ देवोघं। सादासाद०–थिरादितिण्णियुग० ओघं। णवरि असाद० जह० बंधगस्स विसेसो। देवगदिपंचग० सिया० अणंतगुणब्भ०। इत्थि०-पुरिस०-दोआउ०–मणुसग०–पंचजादि-ओरालि०–तेजा०–क०–छस्संठा०–ओरालि०-अंगो०-छस्संघ०-पसत्थापसत्थ०४–मणुसाणु०–अगु०४–आदाउज्जो०–दोविहा०-तसादिदसयुग०-उच्चा० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। अरदि-सोगं देवोघं। णवरि देवगदिसंजुत्तं। तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० ओघं। देवगदिपंचगं तित्थयरभंगो।

२७४. वेउव्वि० आभिणि०दंडओ थीणगिद्धिदंडओ च णिरयोघं। तिरिक्खायु-तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० णिरयोघं। सेसाणं पगदीणं देवोघं। णवरि इत्थि०-णवुंस० णिरयोघं। एवं वेउव्वियमि०।

२७५. [आहार०-]आहारमि० आभिणि० ज० बं० चदुणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४–उप०-पंचंत० णि०। तं तु०। साद०-देवगदिआदिसत्तावीसं-उच्चा० णि० तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ०। एवमण्णोण्णं तं तु०। साद ज० बं० सव्वट्ठ०भंगो। णवरि अट्ठक० वज्ज०। देवगदी धुवं। एवं सादभंगो देवाउ०-थिर-सुभ-

अनन्तगुणा अधिक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन और अनन्तानुबन्धी चारका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। सातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि असातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके विशेष जानना चाहिए। देवगति पञ्चकका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, दो आयु, मनुष्यगति, पाँच जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, छह संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रसादि दस युगल और उच्चगोत्रका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। अरति और शोकका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिसंयुक्त करना चाहिए। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका भङ्ग ओघके समान है। देवगतिपञ्चकका भङ्ग तीर्थङ्कर प्रकृतिके समान है।

२७४. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणदण्डक और स्त्यानगृद्धिदण्डक सामान्य नारकियोंके समान है। तिर्यञ्चायु, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए।

२७५. आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है। सातावेदनीय, देवगति आदि सत्ताईस प्रकृतियां और उच्चगोत्रका नियमसे तथा तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तं तु पतित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग सर्वार्थसिद्धिके समान है। इतनी विशेषता है कि आठ कषायोंको छोड़कर कहना चाहिए।

जस० । एवं तप्पडिपक्खाणं । णवरि देवाउ० णत्थि ।

२७६. देवगदि० ज० बं० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-चदुसंज०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । उच्चा० णि० । तं तु० । णामाणं सत्थाणभंगो । एवं सव्वसंकिलिट्ठाणं ।

२७७. कम्मइ० आभिणि० ज० बं० दोगदि०-दोसरीर०-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । सेसं ओरालियमिस्स०भंगो । थीणगि०[३-] मिच्छ०-अणंताणु०४ ज० बं० मणुस०-मणुसाणु०-उज्जो०-उच्चा० सिया० अणंतगुणब्भ० । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० । तं तु० । सेसाणं ओघं । णवरि दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु० सिया० अणंतगुणब्भ० । देवगदि०४ ओरालियमिस्स०भंगो । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सत्तमपुढविभंगो ।

२७८. ओरालि० ज० बं० एइंदि०-थावरादि०४ सिया० अणंतगुणब्भ० ।

देवगतिको ध्रुव करना चाहिए । इसी प्रकार सातावेदनीयके समान देवायु, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इसी प्रकार इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि देवायु नहीं है ।

२७६. देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है । इसी प्रकार सर्व संक्लेशसे जघन्य बँधनेवाली प्रकृतियोंका जानना चाहिए ।

२७७. कार्मणकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष भङ्ग औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचारके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । देवगतिचतुष्कका भङ्ग औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है । तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका भङ्ग सातवीं पृथिवीके समान है ।

२७८. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रियजाति और स्थावर आदि चारका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है ।

पंचिं०-ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तस४ सिया० । तं तु० । एवं ओरालिय०भंगो तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-णिमि०-पंचिं०-पर०-उस्सा०-उज्जोव० । तस०४ मूलोघं । सेसाणं ओरालियमिस्स०भंगो ।

२७९. इत्थिवेदेसु आभिणि० ज० बं० चदुणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-पंचंत० णि० जहण्णा० । साद०-जस०-उच्चा० णि० अणंतगुणब्भ० । एवमेदाओ अण्णोण्णं जहण्णा० । सेसाणं खवगपगदीणं ओघं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२८०. सादा० ज० बं० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ० । सेसं पंचिंदियतिरिक्खभंगो । तित्थ० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं असाद०-थिरादितिण्णियु० । इत्थि०-णवुंस०-चदुआउ०-चदुगदि-चदुजादि छस्संठा०-छस्संघ०-चदुआणु०-दोविहा०-थावरादि०४-मज्झिल्ल०३-दोगो० पंचिं०तिरिक्खभंगो ।

२८१. पंचिंदि० ज० बं पंचणा०-णवदंस०-असाद०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णिरयग०-हुंडसंठा०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०-णीचा०-पंचंतरा० णि० अणंतगुणब्भ० । वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-

---

पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत और त्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार औदारिकशरीरके समान तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, निर्माण, पञ्चेन्द्रियजाति, परघात, उच्छ्वास और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । त्रसचतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष मूलोघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है ।

२७९. स्त्रीवेदी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद और पाँच अन्तरायका नियमसे जघन्य अनुभाग बन्ध करता है । सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार परस्पर जघन्य अनुभाग बन्ध करनेवाली इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । शेष क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है ।

२८०. सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार असातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, चार आयु, चार गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, चार आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार, मध्यके तीन युगल और दो गोत्रका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है ।

२८१. पञ्चेन्द्रियजातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नरकगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरु-

पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि०। तं तु०। एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-[तस०]।

२८२. ओरालि० ज० बं० हेट्ठा उवरि पंचिंदियजादिभंगो। तिरिक्ख०-एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर०-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्भ०। तेजइगादीणं० णि०। तं तु०। आदाउज्जो० सिया०। तं तु०। [एवं आदाउज्जो०]।

२८३. तेज० जह० हेट्ठा उवरिं ओरालिय०भंगो। दोगदि-एइंदि-दोआणु०-अप्पसत्थ०-थावर०-दुस्सर० सिया० अणंतगु०। पंचिं०-ओरालि०-वेउव्वियदुग-आदाउ०-तस० सिया०। तं तु०। कम्म०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि०। तं तु०। हुंड०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिरादिपंच० णि० अणंतगु०। एवं कम्मइगादिसंकिलिट्ठाणं।

लघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और त्रसकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२८२. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पूर्वकी और अन्तकी प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियजातिके समान है। तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तैजसशरीर आदिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार अर्थात् औदारिकशरीरके भङ्ग समान आतप और उद्योतका भंग है।

२८३. तैजसशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पूर्वकी और अन्तकी प्रकृतियोंका भंग औदारिकशरीरके समान है। दो गति, एकेन्द्रियजाति, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीरद्विक, आतप और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार संक्लेशसे बँधनेवाली कार्मणशरीर आदि प्रकृतियोंका सन्निकर्ष जानना चाहिए।

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२८४. ओरालि०अंगो० ज० बं० हेट्ठा उवरिं तेजइगभंगो। बीइंदि०-पंचिं०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-पज्जत्तापज्जत्त०-दुस्सर[2]० सिया० अणंतगु०। तिरिक्खगदिसंजुत्ताओ णिय० अणंतगु०। तित्थयरं ओघं।

२८५. पुरिसेसु सत्तण्णं कम्माणं इत्थिभंगो। पंचिंदिय०-ओरालि०-वेउव्वि०-आहार०-तेजा०-क०-तिण्णि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-आदाउज्जो०-तस०४-णिमि०-खविगाणं तित्थय० ओघं। सेसाणं इत्थिभंगो।

२८६. णवुंसगे पढमदंडओ इत्थिभंगो। सेसं ओघं। णवरि पंचिंदि० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-असाद०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगु०। दोगदि[3]०-असंप०-दोआणु[3]०-णीचा० [सिया०] अणंतगु०। दोसरीर-दोअंगो०-उज्जो० सिया०। तं तु०। तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु[4]०३-तस०४-णिमि० णि०। तं तु०। एवं पंचिंदियभंगो तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि०। ओरालि[5]०-ओरालि०-

२८४. औदारिक आङ्गोपांगके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पूर्वकी और अन्तकी प्रकृतियोंका भंग तैजसशरीरके समान है। द्वीन्द्रियजाति, पञ्चेन्द्रियजाति, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तिर्यञ्चगति संयुक्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तीर्थङ्करप्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है।

२८५. पुरुषवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, आहारकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, तीन आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, आतप, उद्योत, त्रसचतुष्क, निर्माण, क्षपक प्रकृतियाँ और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदीके जीवोंके समान है।

२८६. नपुंसकवेदी जीवोंमें प्रथम दण्डकका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है। शेष भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रियजातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो गति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। औदारिक

१. आ० प्रतौ अप्पसत्थ०४ इति पाठः। २. ता० आ० प्रत्योः -पज्जत्त परो० दुस्सर इति पाठः। ३. ता० प्रतौ दोगदि० असंप (अप्पस) त्थ दोआणु०, आ० प्रतौ दोगदि० अप्पसत्थ० दोआणु० इति पाठः। ४. ता० प्रतौ अगु०४ इति पाठः। ५. आ० प्रतौ तस ४ णिमि० ओरालि० इति पाठः।

अंगो०-उज्जो० णिरयभंगो। आदाव० तिरिक्खभंगो। सेसं ओघं।

२८७. अवगदवेदेसु अप्पप्पणो पगदीओ ओघो।

२८८. कोधादि०४ ओघं। णवरि कोधे०१८ णिय० जह०। माणे०१७ जह०। मायाए१६ जह०। लोभे० ओघो।

२८९. मदि-सुद०-आभिणि० ज० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि०। तं तु०। सादावे०-देवगदिसत्तावीसं-उच्चा० णि० अणंतगु०। एवमेदाओ तं तु० पदिदाओ[1] अण्णमण्णस्स तं तु०।

२९०. अरदि० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-दु०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगु०। सादासाद०-तिण्णिगदि-दोसरीर-दोअंगो[2]०वज्जरि०-तिण्णिआणु०-उज्जो०-थिरादि[3]तिण्णियुग०-दोगो०सिया०अणंतगु०।

मार्गदर्शक—आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

शरीर, औदारिकआंगोपांग और उद्योतका भंग नारकियोंके समान है। आतपका भंग तिर्यञ्चोंके समान है। शेष भंग ओघके समान है।

२८७. अपगतवेदी जीवोंमें अपनी अपनी प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है।

२८८. क्रोधादि चार कषायोंमें ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि क्रोध कषायमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तराय इन अठारह प्रकृतियोंका नियमसे एक साथ जघन्य अनुभागबन्ध होता है। मानकषायमें संज्वलन क्रोधके सिवा सत्रह प्रकृतियोंका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध होता है। माया कषायमें संज्वलनक्रोध और संज्वलन मानके सिवा सोलह प्रकृतियोंका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध होता है। लोभकषायमें ओघके समान भंग है।

२८९. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सातावेदनीय, देवगति आदि सत्ताईस प्रकृतियां और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार इन तं तु पतित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष परस्पर आभिनिबोधिकज्ञानावरणके समान जानना चाहिए।

२९०. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, तीन गति, दो शरीर, दो आंगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर आदि तीन युगल और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। शेष भंग ओघके

१. ता० प्रतौ तं तु० पंचिंदि (दिया) ओ, आ० प्रतौ तं तु० पंचिंदियाओ इति पाठः। २. आ०प्रतौ अगु० ३ पसत्थ० इति पाठः। ३. ता० आ० प्रत्योः दोगो० इति पाठः। ४. आ० प्रतौ तिण्णि आणु० थिरादि० इति पाठः।

सेसं ओघं। एवं विभंग०।

२९१. आभिणि०-सुद०-ओधि० खविगाणं पगदीणं अरदि-सोगाणं च ओघं संजमपाओग्गाणं च। साद० ज० बं० पंचणा०-छदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-भय-दु०-पंचिं०-समचदु०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगु०। अट्ठक०-चदुणोक०-दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-तित्थय० सिया० अणंतगु०। दोआउ०-थिरादितिण्णि-युग० सिया०। तं तु०। एवमसा०-दोआउ०-थिरादितिण्णियु०।

२९२. मणुस० ज० बं० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर-असुभ-अजस०-पंचंत० णि० अणंतगु०। पंचिंदियादि याव णिमि०-उच्चा० णि०। तं तु०। एवं मणुसगदिपंच०।

२९३. देवगदि ज० बं० हेट्ठा उवरि मणुसगदिभंगो। णाम० सत्थाणभंगो। एवं देवगदि०४।

२९४. पंचिंदि० ज० बं० हेट्ठा उवरि मणुसगदिभंगो। णामाणं० दोगदि-

समान है। इसी प्रकार अर्थात् मत्यज्ञानी जीवोंके समान विभङ्गज्ञानी जीवोंके जानना चाहिए।

२९१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका, अरति शोकका व संयमप्रायोग्य प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। आठ कषाय, चार नोकषाय, दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो आयु और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार असातावेदनीय, दो आयु और स्थिर आदि तीन युगलकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२९२. मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय बारह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रियजातिसे लेकर निर्माण तक और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार मनुष्यगतिपञ्चककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२९३. देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। तथा नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है। इसी प्रकार देवगतिचतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२९४. पञ्चेन्द्रियजातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और

दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरिस०--दोआणु०--तित्थ० सिया० । तं तु० । तेजइगादिपसत्थाओ उच्चा० णि० । तं तु० । अप्पसत्थवण्ण०-[उप०-अथिर-असुभ-अजस०] णि० अणंतगु० । एवं सव्वसंकिलिट्ठाणं पंचिंदियभंगो । [आहारदुगं अप्पसत्थ०४-उप० ओघं ।] एवं ओधिदं०-सम्मादि०-खइगसम्मा०-वेदग०-उवसम०-सम्मामि० । णवरि उवसम० पसत्थाणं तित्थ० वज्ज असंजमपाओग्गा कादव्वा ।

२९५. मणपज्जवे खविगाणं ओघो । सेसाणं ओधिभंगो । एवं संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार-संजदासंजद० । णवरि परिहारवज्जाणं पसत्थपगदीणं तित्थयरं वज्ज० । सुहुमसंप० अवगदवेदभंगो ।

२९६. असंजदेसु आभिणि०दंडओ थीणगिद्धिदंडओ देवगदिसंजुत्तं[1] कादव्वं । सादासाद०-थिरादितिण्णियुग० सम्मादिट्ठि-मिच्छादिट्ठिसंजुत्ताओ कादव्वाओ । इत्थि०-णवुंस० ओघं ।

२९७. अरदि० ज० बं० दोगदि--दोसरीर--दोअंगो०--वज्जरि०--दोआणु०-

बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। नामकर्मकी दोगति, दो शरीर, दो आंगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर आदि प्रशस्त प्रकृतियाँ और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इस प्रकार जिनका सर्वसंक्लेशसे जघन्य अनुभागबन्ध होता है उनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रियजातिके समान जानना चाहिए। आहारकद्विक, अप्रशस्त वर्ण चार और उपघातकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। इसी प्रकार अर्थात् आभिनिबोधिकज्ञानी जीवोंके समान अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें प्रशस्त प्रकृतियोंको तीर्थङ्करप्रकृतिको छोड़कर असंयमप्रायोग्य करना चाहिए।

२९५. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इसी प्रकार संयत, सामयिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि परिहारविशुद्धिसंयतोंमें प्रशस्त प्रकृतियोंका तीर्थङ्कर प्रकृतिको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंमें अपगतवेदी जीवोंके समान भङ्ग है।

२९६. असंयत जीवोंमें आभिनिबोधिकदण्डक और स्त्यानगृद्धिदण्डकको देवगतिसंयुक्त करना चाहिए। सातावेदनीय, असातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलको सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिसंयुक्त करना चाहिए। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग ओघके समान है।

२९७. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो शरीर, दो आङ्गो-

१. आ० प्रतौ आभिणिदंडओ देवगदिसंजुत्तं इति पाठः ।

तित्थ० सिया० अणंतगु० । सेसं ओघं ।

२९८. चक्खु०-अचक्खु० ओघं । किण्णाए आभिणि०दंडओ थीणगिद्धिदंडओ णिरयभंगो । सादादिचदुयुग०--अरदि--सोगं असंजदभंगो । इत्थि०--णवुंस० ओघं । सेसं णवुंसगभंगो ।

२९९. णील--काऊए पढमदंडओ बिदियदंडओ तदियदंडओ अरदि-सोगदंडओ किण्णभंगो । इत्थि० ज० बं० तिरिक्खोघं । मणुस०-देवगदि-दोआणु० सिया० अणंतगु० । णवुंस०-थीणगिद्धिदंडओ पंचिंदि०दंडओ णिरयोघं ।

३००. वेउव्वि० ज० बं० पंचणा०-णवदंस०-असादा०--मिच्छ०--सोलसक०-पंचणोक०--णिरयगदिअट्ठावीसं--णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगु० । वेउव्वि०अंगो० आदावं तिरिक्खोघं । सेसं किण्णभंगो ।

३०१. तेऊए आभिणि०दंडओ परिहार०भंगो । बिदियदंडओ ओघं । साद० ज० बं० पंचणा०--छदंसणा०--चदुसंज०--भय--दु०--तेजा०--क०--पसत्थापसत्थ०४--अगु०४--बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगु० । थीणगि०३--मिच्छ०-बारसक०-सत्तणोक०-देवगदि-दोसरीर-दोअंगो०-देवाणु०-आदाउज्जो०-तित्थ० सिया०

पाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष भङ्ग ओघके समान है ।

२९८. चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है । कृष्णलेश्यामें आभिनिबोधिकज्ञानावरणदण्डक और स्त्यानगृद्धिदण्डकका भङ्ग नारकियोंके समान है । साता आदि चार युगल, अरति और शोकका भङ्ग असंयतोंके समान है । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है ।

२९९. नील और कापोत लेश्यामें प्रथम दण्डक, द्वितीय दण्डक, तृतीय दण्डक और अरति-शोकदण्डकका भङ्ग कृष्णलेश्याके समान है । स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । मनुष्यगति, देवगति, और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नपुंसकवेद, स्त्यानगृद्धिदण्डक और पञ्चेन्द्रियजाति दण्डकका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है ।

३००. वैक्रियिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नरकगति आदि अट्ठाईस प्रकृतियाँ नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और आतपका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग कृष्णलेश्याके समान है ।

३०१. पीतलेश्यामें आभिनिबोधिकज्ञानावरण दण्डक परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है । द्वितीय दण्डकका भङ्ग ओघके समान है । सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करने वाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, सात नोकषाय, देवगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानु,

अणंतगु० । तिण्णिआउ०-दोगदि-दोजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-तस-थावर-थिरादिछयुग०-दोगो० सिया० । तं तु० । एवं असाद०-थिरादितिण्णि-युग० । इत्थि० ज० बं० णीलभंगो । णवुंस०-दोआउ० देवभंगो ।

३०२. देवाउ० ज० बं० सादा०-थिर-सुभ-जस० णि० । तं तु० । मिच्छा-दिट्ठिसंजुत्ता कादव्वा । सेसं णि० अणंतगु० ।

३०३. देवगदि ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-इत्थि०-अरदि-सोग-भय-दु०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगु० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि० । तं तु० । णामाणं सत्थाणभंगो । सेसं सोधम्मभंगो । एवं पम्माए वि० । णवरि णामाणं सहस्सारभंगो । देवगदि०४ तेउभंगो । णवरि पुरिस० धुवं० ।

३०४. सुक्काए खविगाणं ओघं । सादादिचदुयुग० पम्मभंगो । देवगदि०४ पम्मभंगो । सेसं णवगेवज्जभंगो ।

पूर्वी, आतप, उद्योत और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । तीन आयु, दो गति, दो जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस स्थावर, स्थिर आदि छह युगल और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो [illegible] अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार अर्थात् सातावेदनीयके समान असातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग नीललेश्याके समान है । नपुंसकवेद और दो आयुका भङ्ग देवोंके समान है ।

३०२. देवायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सातावेदनीय, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । किन्तु इन्हें मिथ्यादृष्टिसंयुक्त करना चाहिए । शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है ।

३०३. देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, स्त्रीवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानसन्निकर्षके समान है । शेष भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है । इसी प्रकार अर्थात् पीत लेश्याके समान पद्मलेश्यामें भी जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसमें नामकर्मकी प्रकृतियों का भङ्ग सहस्रार कल्पके समान है । तथा देवगतिचतुष्कका भङ्ग पीतलेश्याके समान है । इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदको ध्रुव करना चाहिए ।

३०४. शुक्ललेश्यामें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । सातावेदनीय आदि चार युगलोंका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है । देवगतिचतुष्कका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है । शेष प्रकृतियों का भङ्ग नौग्रैवेयकके समान है ।

३०५. भवसि० ओघं। अब्भवसि० आभिणि०दंडओ [मदि०भंगो। णवरि] तिरिक्ख०--तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया०। तं तु०। दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-व०ज्जरि-दोआणु०-उज्जो०-उच्चा० सिया० अणंतगु०। इत्थि०-णवुंस० ओघं। अरदि-सोग० मदि०भंगो। उवरि सव्वओघं[1]।

३०६. सासणे आभिणि० ज० बं० चदुणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-पंच-णोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि०। तं तु०। सादा०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० अणंतगु०। तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०--णीचा० सिया०। तं तु०। दोगदि--दोसरीर-दोअंगो०--वज्जरि०-दोआणु०-उज्जो०-उच्चा० सिया० अणंतगु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स तं तु०।

३०७. सादा० ज० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दु०--पंचिंदि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णि० अणंतगु०। चदुणोक०-

३०५. भव्योंमें ओघके समान भङ्ग हैं। अभव्योंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणदण्डकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग मत्यज्ञानियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग ओघके समान है। अरति और शोकका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। आगेका सब भङ्ग ओघके समान है।

३०६. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सातावेदनीय, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध होता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध होता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध होता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इस प्रकार तंतु पतित इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०७. सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क,

१. आ० प्रतौ सव्वमोहं इति पाठः।

तिरिक्ख०३–दोसरीर-दोअंगो०-उज्जो० सिया० अणंतगु० । तिण्णिआउ०-मणुसग०-देवग०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआणु०–थिरादिछयुग०-उच्चा० सिया० । तं तु० । एवं तंतु पदिदाणं सव्वाणं सादभंगो । पंचिंदियदंडओ णिरयभंगो । दोआउ० देवभंगो । देवाउ० ओघं ।

३०८. मिच्छादिट्ठी० मदि०भंगो । सण्णी० ओघो । असण्णीसु आभिणि-दंडओ देवगदिसंजुत्तं० कादव्वं । सेसं तिरिक्खोघं । आहार० ओघं । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

एवं जहण्णपरत्थाणसण्णिकासो समत्तो ।

१६ भंगविचयपरूवणा

सर्वार्थसिद्धि :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

३०९. णाणाजीवेहि भंगविचयं दुवि०-जह० उक्कस्सयं च । उक्क० पगदं । तत्थ इमं अट्ठपदं मूलपगदिभंगो । एदेण अट्ठपदेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० सव्वपगदीणं उक्कस्साणुक्कस्स० छभंगा । तिण्णिआउणं उक्कस्साणुक्कस्स० सोलसभंगा । एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालि०-ओरालियमि०-कम्म-इग०--णवुंस०--कोधादि०४–मदि०--सुद०--असंजद०--अचक्खु०--तिण्णले०--भवसि०

अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। चार नोकषाय, तिर्यञ्चगतित्रिक, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तीन आयु, मनुष्यगति, देवगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, स्थिर आदि छह युगल और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार तंतु पतित सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सातावेदनीयके समान है। पञ्चेन्द्रियजातिदण्डकका भङ्ग नारकियोंके समान है। दो आयुओंका भङ्ग देवोंके समान है। देवायुका भङ्ग ओघके समान है।

३०८. मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है। संज्ञी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। असंज्ञियोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरण दण्डक देवगतिसंयुक्त करना चाहिए। शेष भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। आहारक जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाय-योगी जीवोंके समान भङ्ग है।

इस प्रकार जघन्य परस्थान सन्निकर्ष समाप्त हुआ।

१६ भङ्गविचयप्ररूपणा

३०९. नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसके विषयमें यह अर्थपद मूलप्रकृतिके समान है। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है–ओघ और आदेश। ओघसे सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टअनुभागबन्धके छह भङ्ग हैं। तीन आयुओंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टके सोलह भङ्ग हैं। इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी,

अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि०-आहार०-अणाहारग त्ति । णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहारएसु-देवगदिपंच० उक्कस्साणुक्कस्स० सोलस भंगा ।

३१०. णेरइएसु-दोआउ० दो वि पदा सोलस भंगा । सेसाणं सव्वपगदीणं दोपदा छभंगा । एवं णिरयभंगो पंचिं०तिरि०अपज्ज० मणुस०३-सव्वदेव०-सव्व-विगलिंदि०--पंचिं०--तस० तेसिं पज्जत्तापज्जत्ता बादर-बादरपुढवि०-आउ०--तेउ० वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेयपज्जत्ताणं च पंचमण०-पंचवचि०-वेउव्वि०--इत्थि०-पुरिस०-विभंग--आभिणि०--सुद०-ओधि०-मणपज्ज०--संजद० याव संजदासंजदा० चक्खुदं०-ओधिदं०-तिण्णिले०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-सण्णि त्ति ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

३११. मणुस०अपज्ज०-वेउव्वियमि०-आहार०-आहार०-आहारमि०-अवगद०-सुहुमसं०--उवसम०--सासण०--सम्मामि० उक्क० अणुक्क० सोलस भंगा । एइंदिएसु-दोआउ ओघं । सेसाणं उक्कस्साणुक्कस्स० अथिरबंधगा य अबंधगा य । एवं एइंदियभंगो बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०--वाउ०अपज्ज०--सव्ववणप्फदिबादर-पत्तेय०अपज्ज०--सव्व-णियोदाणं सव्वसुहुमाणं च । णवरि एइंदि०-बादरएइंदि० तस्सेव पज्जत्तगेसु उज्जोवं ओघं । पुढ०- आउ०-तेउ०-वाउ०-बादर-पत्ते० सव्वपगदीणं ओघं ।

एवं उक्कस्सं समत्तं ।

क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगतिपञ्चकके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्धके सोलह भङ्ग हैं।

३१०. नारकियोंमें दो आयुओंके दोनों ही पदोंके सोलह भङ्ग हैं। शेष सब प्रकृतियोंके दो पदोंके छह भङ्ग हैं। इसी प्रकार नारकियोंके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च तीन पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्यत्रिक, सब देव, सब विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय और त्रस तथा इन दोनोंके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर वायुकायिक, बादर वनस्पति प्रत्येक शरीर और इन पाँचोंके पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, विभङ्गज्ञानी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयतोंसे लेकर संयतासंयत तकके जीव, चक्षुदर्शनी, अवधिदर्शनी, तीन लेश्या-वाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

३११. मनुष्यअपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, सूक्ष्मसाम्परायिक संयत, उपशमसम्यग्दृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्धके सोलह भङ्ग हैं। एके-न्द्रियोंमें दो आयुओंका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्धके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं। इसी प्रकार एकेन्द्रियोंके समान बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, बादर वायु-कायिक अपर्याप्त, सब वनस्पति कायिक, बादर प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सब निगोद और सब सूक्ष्म जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्त जीवोंमें उद्योत ओघके समान है। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक

३१२. जहण्णए पग० । तत्थ इमं अट्ठपदं मूलपगदिभंगो । एदेण अट्ठपदेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० सादासाद०-तिरिक्खाउ०-मणुस०-चदुजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-मणुसाणु०-दोविहाय०-थावरादि४-थिरादिछयुग०-उच्चा० ज०अज० अत्थि बंधगा य अबंधगा य । सेसाणं पगदीणं ज० अज० उक्कस्सभंगो । एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि--ओरालिय०--ओरालियमि०--कम्मइ०--णवुंस०--कोधादि०४--मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खु०--तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि०-आहार०-अणाहारए त्ति ।

३१३. एइंदिय-बादरएइंदिय-पज्जत्त मणुसाउ०-तिरिक्खगदितिगं ओघं । सेसाणं ज० अज० अत्थि बंधगा य अबंधगा य । बादरएइंदियअपज्ज० सव्वसुहुमाणं बादर-चदुकायअपज्जत्तगाणं सव्ववणप्फदि--बादरपत्तेयअपज्जत्त०--सव्वणियोद० मणुसाउ० ओघं । सेसाणं ज० अज० अत्थि बंध० अबंध० । पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादर-पत्ते०--बादरपुढवि०-आउ०--तेउ० [वाउ०] धुविगाणं पसत्थापसत्थाणं केसिं च परियत्तीणं च मणुसाउ० ज० अज० उक्कस्सभंगो । सेसाणं ज० अज० अत्थि बंधगा

और बादर प्रत्येक वनस्पतिकायिक जीवोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट समाप्त हुआ ।

३१२. जघन्यका प्रकरण है । उसके विषयमें यह अर्थपद मूल प्रकृतिके समान है । इस अर्थपदके अनुसार दो प्रकारका निर्देश है–ओघ और आदेश । ओघसे सातावेदनीय, असातावेदनीय, तिर्यञ्चायु, मनुष्यगति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार, स्थिर आदि छह युगल और उच्चगोत्रके जघन्य और अजघन्य अनुभागबन्धके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागबन्धका भङ्ग उत्कृष्टके समान है । इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

३१३. एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय और बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायु और तिर्यञ्चगतित्रिकका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं । बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सब सूक्ष्म, बादर चार कायवाले अपर्याप्त, सब वनस्पतिकायिक, बादर प्रत्येक वनस्पतिकायिक अपर्याप्त और सब निगोद जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक वायुकायिक, बादर प्रत्येक वनस्पतिकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक जीवोंमें प्रशस्त और अप्रशस्त ध्रुवबन्धवाली, कितनी ही परावर्तमान प्रकृतियाँ और मनुष्यायुके जघन्य और अजघन्य अनुभागबन्धका भङ्ग उत्कृष्टके समान है । शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं ।

१. आ० प्रतौ अज० अत्थि इति पाठः । २. आ० प्रतौ तेउ० बादरपत्ते० इति पाठः ।